६ रुपए

वृद्धावस्था अंक

द्वैमासिक

जीवनीय

स्वास्थ्य पत्रिका

हेमंत '९१
वर्ष २, अंक ३

वृद्धावस्था में मानसिक स्वास्थ्य

जोड़ों के दर्द का इलाज

शक्तिवर्धक अश्वगंधा

स्वाद, स्वास्थ्य एवं पर्यावरण

वातनाशक तेल

सौन्दर्य प्रसाधन कस्तूरी

गुणकारी लहसुन

भय का भूत भगाइये

गर्दन का दर्द

सूर्य नमस्कार

अम्लपित्त की रोकथाम

सभी स्थायी स्तंभों एवं जानकारी सहित

जीवनीय द्वैमासिक

मानद संपादक मंडल (लखनऊ)

वैद्य सुल्तान अली खां
पं. काशीनाथ गोपाल गोरे
वैद्य पूर्ण चंद जैन
वैद्य बदलूराम रसिक
डा. मोहन बांडे
डा. पारस नाथ मिश्र
वैद्य राजकिशोर मिश्र
डा. रवि कुमार शर्मा
डा. हरि प्रकाश शर्मा
वैद्य वाचस्पति त्रिवेदी
डा. वेद प्रकाश

कार्यकारी संपादक
डा. नरेंद्र नाथ मेहरोत्रा

संयोजक
पं. माधवाचार्य

संपादकीय सहायक
वैद्य उमेश चंद्र शर्मा
कु. वीना टंडन

मुख पृष्ठ साज-सज्जा
श्री अली कौसर

वितरण - विज्ञापन सलाहकार
श्री वामिक एफ. रहमान

इस पत्रिका के लिये कापार्ट से मिले अनुदान के हम आभारी हैं

संपादकीय कार्यालय
लो. स्वा. प. सं. स.
ई - III/२५०, सेक्टर एच
अलीगंज, लखनऊ - २२६०२०
फोन - ०५२२-७७५६८

चित्र डॉ. एच.पी. शर्मा

वर्ष : २ अंक : ३
१६ नवंबर, ९१ - १५ जनवरी, ९२

जीवनीय के चंदे की दरें

एक प्रति	६ रु.
वार्षिक	३० रु.
द्विवार्षिक	५५ रु.
त्रिवार्षिक	८० रु.
आजीवन	३५० रु.

इस पत्रिका के कम्पोज़र
विनायक
सी- १५/१०, पेपर मिल कालोनी, निशातगंज लखनऊ।

लोक स्वास्थ्य परंपरा सवर्धन समिति की ओर से मुद्रक तथा प्रकाशक डा. नरेन्द्र नाथ मेहरोत्रा द्वारा प्रकाश पैकेजर्स, २५७, गोलागंज लखनऊ - १८ से मुद्रित तथा ई -III/२५०, सेक्टर एच, अलीगंज, लखनऊ - २० से प्रकाशित, संपादक डा. नरेन्द्र नाथ मेहरोत्रा

संपादकीय सलाहकार समिति
सिद्ध वैद्य ब्रहमानंद स्वामिगल, कोयंबटूर
हकीम अल्ताफ अहमद आज़मी, नई दिल्ली
डा. गीता बामेजई, नई दिल्ली
वैद्य विवेकानंद पांडे, नई दिल्ली
वैद्य भगवान दाश, नई दिल्ली
वैद्य बृहस्पति देव त्रिगुण, नई दिल्ली
वैद्य मायाराम उनियाल, नई दिल्ली
श्री गंगा राम जानू आवारी, नासिक
वैद्य शिव कुमार मिश्र, पीलीभीत
वैद्य सुभाष रानाडे, पुणे
डा. उमा, बंगलूर
डॉ. भारतेन्दु प्रकाश, बाँदा
हकीम सैयद खलीफतुल्लाह, मद्रास
वैद्य (श्रीमती) श. कोपिकर, मुंबई
वैद्य रमेश म. नानल, मुबई
वैद्य भास्कर वि. साठ्ये, मुंबई
वैद्य नरेन्द्र सो. भट्ट, मुंबई
हकीम सैफुद्दीन अहमद, मेरठ
वैद्य वी. बी. म्हैस्कर, वड़ोदरा
वैद्य रामहर्ष सिंह, वाराणसी

लोक स्वास्थ्य परंपरा संवर्धन समिति
रजिस्टर्ड कार्यालय
पो. बा. ७१०२ रामनाथ पुरम्
कोयंबतूर - ६४१०४५
फोन : (०४२२) २३१८८, २६९५३, ३०१३२
मध्य भारत कार्यालय
श्रीमती साधना काले
बी-२, पुष्पगंधा फ्लैटस्, आशा मंगल के सामने,
धरम पेठ, नागपुर - ४४० ०१०
फोन : (०७१२) ५३५७३०
पश्चिम क्षेत्रीय कार्यालय
द्वारा एकेडमी ऑफ डेवेलपमेन्ट साइन्सेस्,
ग्रा. व पो. कशैले, ता. करजत
रायगढ़, महाराष्ट्र
दक्षिण क्षेत्रीय कार्यालय
द्वारा पी. पी. एस. टी. फाउंडेशन
२९, IV मेन रोड, गांधी नगर, अड्यार
मद्रास - ६०० ०२० फोन : ४१८१६६

संपादकीय

यह एक विडम्बना है कि हमारे देश में भी पश्चिम के तथाकथित "विकसित" देशों की भाँति दिन-प्रति-दिन वृद्धों के सामाजिक दायित्व के बारे में कई समस्याएं उठने लगी हैं। यह दुर्भाग्य का विषय है कि भारत जैसे देश में भी समाज के इस महत्वपूर्ण अंग का तिरस्कार बढ़ता जा रहा है। भारतीय दर्शन में आश्रम व्यवस्था को सदैव से विशेष महत्व दिया जाता रहा है। इस व्यवस्था की मान्यताओं के अनुसार न केवल व्यक्ति के सुख-शांति का ध्यान रखा जाता है वरन् समाज एवं प्रकृति से उसके सामंजस्य का भी उतना ही महत्व है। सक्रिय गृहस्थ आश्रम के पश्चात् मनुष्य को वानप्रस्थ आश्रम की सलाह इसलिये दी जाती है कि व्यक्ति समाज से अपने मोह और बन्धन को धीरे-धीरे तोड़कर प्रकृति (वन) की ओर अपना रुझान बढ़ा सके। पर महत्वपूर्ण बात यह है कि यह प्रक्रिया स्वाभाविक हो सके इसलिये धीरे-धीरे कुछ निश्चित नियमों के अन्तर्गत अपने और समाज दोनों के स्वास्थ्य में सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास होता है।

जहाँ एक ओर वानप्रस्थी से अपेक्षा रहती है कि वह बिना किसी लगाव के (स्थितप्रज्ञ भाव से) अपने जीवन भर के अनुभवों का निचोड़ अपने से बाद वाली पीढ़ियों को दे वहीं अपने अनुभवों का कोई दुराग्रह न करे ताकि बदलती परिस्थितियों व परिवेश में निर्णय लेने की छूट नई पीढ़ी को भी रहे। ऐसे दृष्टिकोण वाले वृद्ध सामान्यतया मानसिक रूप से स्वस्थ एवं तनावरहित रहते हैं तथा समाज को अपने अनुभव से लाभान्वित भी करते हैं। यहाँ यह बात विशेष रूप से महत्वपूर्ण है कि वानप्रस्थी अपने परिवार के स्वार्थ से परे समाज, देश एवं "वसुधैव कुटुम्बकम्" के बीच समन्वय स्थापित करने में विशेष योगदान करता है। इसीलिये इस प्रक्रिया में वह परिवार एवं समाज को, जो कुछ सम्भव हो देने का (सेवा भाव से) प्रयास भी करता है।

इसका सबसे सरल उदाहरण प्रचलित सामूहिक परिवार व्यवस्था है। दो-तीन पीढ़ियों तक सारे कुटुम्ब को एक सूत्र में जोड़े रखना वहीं सम्भव हो पाता है जहाँ कुटुम्ब का मुखिया बिना किसी पक्षपात के सभी के सुख-दुःख का बराबर ध्यान रख पाता है। ऐसे माहौल में बच्चों, किशोरों एवं युवाओं के विकास पर विशेष ध्यान दिया जा सकता है।

पिछले दिनो जहाँ इस आश्रम व्यवस्था और सामूहिक परिवार के महत्व को विश्व भर में पहचाना गया है वहीं हमारे देश में दुर्भाग्यवश इस व्यवस्था के महत्व को भुलाया जा रहा है। इन सभी का असर हमारे यहाँ के परिवारों में बिखरन, युवाओं की दिशाहीनता और समाज में फैलती अव्यवस्था के रूप में भी दृष्टिगोचर हो रहा है। वहीं दूसरी ओर हमारे समाज में वृद्धों की देखभाल की समस्या बढ़ती जा रही है।

आज आवश्यकता है कि जहाँ एक ओर हमारे वानप्रस्थी बुजुर्ग यह समझें कि उन्हें निःस्वार्थ भाव से समाज को अपने अनुभव का निचोड़ देना है वहीं युवा-गृहस्थ पीढ़ी को यह मानना ही होगा कि बालक एवं किशोरावस्था से युवक और वृद्धावस्था के बीच एक निरन्तर तारतम्य बनाए रखने में वानप्रस्थी बुजुर्गों की एक महत्वपूर्ण भूमिका है। इससे पहले कि ये उपेक्षित वृद्धों की समस्या एक विषाणु की तरह हमारे समाज में फैलने लगे, हम सबको एकजुट होकर अपने समाज के एक महत्वपूर्ण एवं अनुभवी अंग को मानसिक एव शारीरिक रूप से स्वस्थ बनाए रखने के लिये विशेष प्रयास करना होगा।

पाठकों के पत्र

सम्पादक जी,

"जीवनीय" का मैं सदस्य हूँ। आपकी पत्रिका बहुत रुचि से पढ़ता हूँ। आपके द्वारा भेजे गये सभी अंक मुझे प्राप्त हो चुके हैं किन्तु ग्रीष्म अंक मुझे नहीं मिला है। कृपया उसे शीघ्र भेजने का कष्ट करें क्योंकि इस पत्रिका का कोई भी अंक मैं छोड़ना नहीं चाहता हूँ।

डॉ. बी.एन. तिवारी, लखनऊ

मैंने आपकी पत्रिका पढ़ी और मुझे बहुत पसन्द आई। मैं इसका प्रचार व प्रसार करना चाहता हूँ। कृपया इस सम्बन्ध में जानकारी देने का कष्ट करें।

डॉ. सूरश्याम सिंह पटेल, बाँदा

एक बुक-स्टॉल पर मैं कुछ पत्रिकाएँ खरीद रहा था तभी मेरी निगाह "जीवनीय" पत्रिका पर पड़ी और मैं इस पत्रिका को खरीद लाया। पूरी पत्रिका मैंने अच्छी तरह से पढ़ी। यह वनौषधि विज्ञान की एक अनूठी पत्रिका है। आपकी पत्रिका में दिये हुए कई वनस्पतियों के रंगीन चित्र भी पसन्द आये। जिसके कारण उन्हें पाठकों को पहचानने में आसानी होती है। इसके पहले के अंकों को मैंने कई दुकानों पर खोजा लेकिन वे नहीं मिले। कृपया आप मुझे पहले के प्रकाशित हुए अंक भेजें। यह भी बताने का कष्ट करें कि उसके लिए आपके पास कितने रुपये अग्रिम भेजना आवश्यक है। आशा है कि आप मेरे इस अनुरोध को अवश्य स्वीकार करेंगे।

युद्धवीर मलिक, बम्बई

आपके द्वारा प्रेषित "जीवनीय" के अंक मिले। इसके लिए धन्यवाद। "जीवनीय" हमारे तथा गाँव के लोगों के लिए बहुत ही उपयोगी पत्रिका है। यह अत्यन्त ज्ञानवर्द्धक भी है। आपसे अनुरोध है कि आप हमें प्रत्येक अंक उपलब्ध कराने की कृपा करें। हम भी अपने प्रकाशन की प्रतियाँ आपको भेजते रहेंगे।

प्रेमशीला मिश्रा, गोरखपुर

मैंने आपकी पत्रिका "जीवनीय" के लिए मनीऑर्डर द्वारा चन्दा भेजा है लेकिन मुझे अभी तक पत्रिका प्राप्त नहीं हो सकी है। कृपया पत्रिका शीघ्र भेजने का प्रबन्ध करें। मुझे इस पत्रिका की शोधकार्य के लिए यथाशीघ्र आवश्यकता है।

श्रीमती रीता मिश्रा, पटना

मैंने इस वर्ष आपकी पत्रिका "जीवनीय" की सदस्यता ली है और मुझे ग्रीष्म अंक प्राप्त हुआ है। कृपया यह बताने का कष्ट करें कि क्या इससे पहले भी कोई अंक प्रकाशित हुआ है। कृपया यह जानकारी देने का कष्ट करें।

जे. के. महेश्वरी, गोरखपुर

हमें आपकी द्वैमासिक पत्रिका "जीवनीय" की आवश्यकता है। इस हेतु हम मनीऑर्डर द्वारा चन्दा भेज रहे हैं। कृपया यह पत्रिका नियमित रूप से प्रेषित करें।

प्राचार्य, चैतन्य आयुर्वेद महाविद्यालय, भुसावल

सौभाग्य से मुझे "जीवनीय" १५ सितम्बर १९९१ का प्रकाशित अंक पढ़ने का अवसर मिला। इसमें प्रकाशित रोग-निवारण लेख पढ़े, जो कि बहुत उपयोगी सिद्ध हुए। मुझे आशा है कि इससे केवल रोगी को लाभ नहीं पहुँचेगा बल्कि यह सम्पूर्ण मानव जाति के लिए "सन्जीवनी" का कार्य करेगी। इसलिए "जीवनीय" सम्पादकीय परिवार को बहुत-बहुत बधाई।

बी.बी. सिंह भदौरिया, सतना

मैं आपके द्वारा प्रकाशित "जीवनीय" पत्रिका का नियमित वाचक हूँ। मैं तीन साल के लिए इसका ग्राहक बन गया हूँ पिछली पत्रिका में कामला विशेषांक के बारे में विज्ञापन पढ़ा था लेकिन मुझे अब तक वह विशेषांक प्राप्त नहीं हो सका है। कृपया मुझे यह पत्रिका जल्दी भेजने का कष्ट करें।

डॉ. आर.वी. सिंह, पुणे

इस अंक में

हेमंत ऋतुचर्या ४
गर्दन के रोग ६
भय का भूत भगाइए ८
मुख में छालों का इलाज १०
सूर्य नमस्कार १२
ग्रह और हमारा स्वास्थ्य २४
स्वाद, स्वास्थ्य और पर्यावरण २५
राज्यक्ष्मा ३९
अम्लपित्त की आहार चिकित्सा ४१

आवरण लेख

वृद्धावस्था दिनचर्या १४
जोड़ों के दर्द में लाभकारी तेल १७
वार्धक्य - स्वाभाविक रोग १९
बुढ़ापा - समस्याएं और समाधान २०
बुढ़ापे में दिमागी कमजोरी २२
जरा नाशकारी रसायन ४४

औषध द्रव्य

औषध या आहार - लहसुन ३०
धातु पौष्टिक पाक ३६
अश्वत्थ - पीपल ४५

आहार द्रव्य

धनिया की पत्ती २८
गाजर ३२
दूध और उसके उत्पाद ३३
सौंदर्य प्रसाधन - कस्तूरी ४३

स्थायी स्तंभ

दादी माँ के नुस्खे ३४
मधु संचय ४६
पत्र-पत्रिकाओं से ४७
पुस्तक समीक्षा ४८
ज्ञान कोष ४९
शब्द कोष ४९
मस्तराम ५०

हेमन्त ऋतुचर्या

वैद्या संगीता जैन, नागपुर

शरद ऋतु व्यतीत हो चुकी है। शीतल पवन के झोंके अब कँपकपी उत्पन्न करने लगे हैं। विसर्गकाल की अन्तिम व सर्वश्रेष्ठ ऋतु हेमन्त ऋतु का पदार्पण हो चुका है। अगहन और पौष माह इस ऋतु में आते हैं। षडऋतुओं में हेमन्त ऋतु की अपनी एक अलग विशेषता है। इस ऋतु में वातावरण सौम्य होने से सभी मनुष्य व प्राणी स्वस्थ, बलवान और पुष्ट होते हैं। वनस्पतियाँ भी रस–गुण–वीर्य से परिपूर्ण होती हैं। शरद ऋतु में प्रकुपित पित्त दोष का हेमन्त ऋतु में शमन हो जाता है। इस ऋतु में शरीर बल व जठराग्नि बल दोनों उत्तम रहने से रोग प्रतिरोधक क्षमता बनी रहती है और शरीर स्वस्थ रहता है। इसलिये इसे स्वास्थ्यकर ऋतु कहते हैं।

हमारे शरीर की सर्व क्रियाएँ वात, पित्त और कफ दोषों के अधीन होती है। ये जब साम्यावस्था में होते हैं, तब मनुष्य स्वस्थ माना जाता है। प्राकृतिक रूप से इनका अनुपात न्यूनाधिक होता रहता है। जैसे – आयु, दिन, रात और भोजन करने के आरम्भ में कफ, मध्य में पित्त और अन्त में वात दोष की अधिकता होती है। इनसे रोगोत्पत्ति नहीं होती है, अपितु काल के अनुसार ये स्वतः ही शान्त हो जाते हैं। ऋतुओं का भी हमारे शरीर और इन त्रिदोषों पर प्रभाव पड़ता है। प्रत्येक दोष का संचय, प्रकोप, प्रशमन भिन्न–भिन्न ऋतुओं में स्वाभाविक रूप से होता रहता है। दोषों की ये अवस्थाएँ हमारे शरीर में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती हैं। इस समय आहार–विहार में विशेष ध्यान नहीं दिया गया तो दोषों के शीघ्र प्रकुपित होने की सम्भावना हो जाती है। फलतः शरीर विभिन्न रोगों से आक्रान्त हो जाता है। इसलिये आयुर्वेदाचार्यों ने इन ऋतुओं में स्वास्थ्य बनाये रखने के लिये अलग–अलग ऋतुचर्याओं की व्यवस्था की है।

बर्फ, कुल्फी, ठंडे पेय आदि से इस ऋतु में बचें।

उचित आहार

हेमन्त ऋतु में बाह्य वातावरण शीतल होने से शरीर की ऊष्मा बाहर नहीं निकल पाती है। इसलिये उदरस्थ पाचकाग्नि तीक्ष्ण हो जाती है। इस ऋतु में यदि रूक्ष, लघु तथा कटु, तिक्त, कषाय रस प्रधान आहार का सेवन किया गया अथवा निश्चित मात्रा से कम भोजन किया गया तो प्रदीप्त जठराग्नि भोजन को तो शीघ्र ही पचा देती है। इसके पश्चात् वह धातुओं को भी पचाना आरम्भ कर देती है। फलस्वरूप शरीर क्षीण व दुर्बल होने लगता है। अतः पौष्टिक, गुरु, स्निग्ध और मधुर, अम्ल, लवण रस प्रधान आहार का सेवन करना चाहिये। दूध, घृत, मलाई, गुड़, तिल, मखाने, काजू, किशमिश, बादाम, पिश्ते, अखरोट, खसखस आदि से निर्मित पदार्थों का सेवन लाभदायक होता है। फलों में केले, अमरूद, अनार, सेब, सन्तरे, सीताफल, नींबू, आदि; सब्ज़ियों में मेथी, पालक, मूली, लौकी, तरोई, कद्दू, गोभी, आलू, परवल आदि; नये चावल, ज्वार, मक्का, अरहर, मूँग, मसूर, उड़द की दाल आदि का सेवन इस ऋतु में लाभप्रद होता है।

भोजन हमेशा निर्धारित समय पर ही करना चाहिये। आहार–सेवन का समय बदलते रहना उचित नहीं होता है। रोज जिस समय हम भोजन करते हैं, उसी समय में हमारे आमाशय में पाचक रसों का स्राव होता है। भोजन भिन्न–भिन्न समय में करने से पाचक रसों के स्राव में व्यवधान उत्पन्न होकर अपचन, अरुचि, भारीपन, गैस बनना, कब्ज़ियत जैसे लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। रात्रि में सोने के ३–४ घण्टे पूर्व ही भोजन कर लेना चाहिये। भोजनोत्तर खुली हवा में थोड़ा टहलना चाहिये। भोजन हमेशा ताज़ा व गर्म होना चाहिये। चाय, कॉफी

जैसे उष्ण पेय तथा अल्प मात्रा में मद्यपान इस ऋतु में लाभकारी होता है।

उचित विहार

शीत ऋतु में अभ्यंग अर्थात् मालिश अत्यन्त लाभदायक होती है। शीतल वायु के संस्पर्श से त्वचा रूक्ष व स्फुटित हो जाती है। अभ्यंग के लिये सरसों, तिल, नारियल या जैतून के तेल से सारे शरीर की अच्छी तरह से मालिश करनी चाहिये। इससे शरीर बलवान बनता है तथा त्वचा स्निग्ध और कांतिमान हो जाती है। अभ्यंग के पश्चात् बेसन या जौ के आटे का उबटन लगाना चाहिये। जहाँ तक बन सके साबुन का प्रयोग न करें। गुनगुने पानी से स्नान करना चाहिये। अधिक शीतल या अति उष्ण जल से स्नान करना हानिकारक होता है।

नियमित रूप से व्यायाम करना चाहिये। सुबह शीघ्र उठकर प्रातः भ्रमण के लिये जाना चाहिये। प्राणायाम का प्रयोग इस ऋतु में विशेष रूप से करना चाहिये। शरीर के लिये योग्य आसनों को करना चाहिये। इससे शरीर हृष्ट-पुष्ट और बलवान बनता है।

हेमन्त ऋतु में शीत से बचाव करना आवश्यक हो जाता है। ऊनी वस्त्रों एवं गहरे रंग के वस्त्रों का प्रयोग करना चाहिये। सिर व छाती को हमेशा ढक कर रखना चाहिये।

इस ऋतु में शीतल वायु के कारण वात व कफ दोष शीघ्र ही प्रकुपित होकर प्रतिश्याय, श्वास, कास, ज्वर आदि रोग उत्पन्न कर देते हैं। आमवात, सन्धिवात, गठिया आदि रोग शीतकाल में अधिक वेदनादायक हो जाते हैं। बालक और वृद्धजन शीतकालीन व्याधियों से अधिक आक्रान्त होते हैं। बालकों को कफज तथा वृद्धों को वातज रोग विशेष रूप से होते हैं। प्रतिश्याय, श्वास, कास होने पर शुंठी, अदरक, तुलसी, काली मिर्च, पिप्पली, श्रृंग भस्म, अभ्रक भस्म, टंकण, गोदन्ती, सितोपलादि चूर्ण, लक्ष्मीविलास रस, त्रिभुवनकीर्ति रस, आनन्द भैरव रस, श्वासकासचिन्तामणि रस आदि औषधियों को उचित मात्रा में शहद या आद्रक अथवा तुलसीपत्र के रस के साथ लेना चाहिये। आमवात, सन्धिवात, गठिया होने पर रास्नादि गुग्गुल, महायोगराज गुग्गुल, त्रयोदशांग गुग्गुल, बला, रास्ना, दशमूल, त्रिफला, अश्वगंधा, समीरपन्नग रस, बृहद् वातचिन्तामणि रस, एकांगवीर रस, वातकुलान्तक रस आदि औषधियों को रास्नादि क्वाथ, दशमूल क्वाथ या शहद के साथ सेवन करना चाहिये।

हेमन्त ऋतु रसायन सेवन के लिये सर्वोत्तम काल है। पाचन-शक्ति उत्तम रहने से इस समय रसायन द्रव्यों का उत्तम पाक होकर उसका पूर्ण फल शरीर को प्राप्त हो जाता है। अन्य ऋतुओं में पाचकाग्नि क्षीण होने से वह भोजन को ही पचाने में समर्थ होती है। ऊपर से रसायन का सेवन उसे और भी क्षीण बना देता है। इसलिये इस ऋतु में रसायन का सेवन अवश्य करना चाहिये।

"ऋतु सन्धि" यानी कि पूर्व त्रतु का अन्तिम सप्ताह और आगामी ऋतु का प्रथम सप्ताह। इस काल में पूर्व "ऋतुचर्या" का धीरे-धीरे त्याग करके आगामी ऋतुचर्या के नियमों का पालन धीरे-धीरे प्रारम्भ करना चाहिये। इससे हमारे शरीर में असात्म्यजन्य रोग उत्पन्न नहीं हो पाते हैं। इस प्रकार ऋतुचर्या का पालन करके हम हमेशा अपने शरीर को स्वस्थ बनाये रख सकते हैं।

हमें एजेंट चाहिए

जीवनीय के हिंदी व अंग्रेजी दोनों संस्करणों के व्यापक प्रचार-प्रसार के लिए हमें अपने पाठकों व अन्य एजेंटों की मदद चाहिए है। हमें आशा है कि आप हमें इसकी खुदरा बिक्री व वार्षिक चंदे इकट्ठे करने में मदद करेंगे। इस कार्य के लिए हम उपयुक्त कमीशन देने को तैयार हैं। इच्छुक व्यक्ति संबंधित शर्तों के लिए कृपया निम्न पते पर संपर्क करें।

वितरण मैनेजर, जीवनीय
ई-III/२५०, सेक्टर एच,
अलीगंज, लखनऊ - २२६ ०२०

हेमन्त ऋतु के रोग व उपचार

मार्गशीर्ष और पौष के महीनों में हेमन्त ऋतु आती है। आधुनिक कैलेंडर के अनुसार इसका समय नवम्बर मध्य से जनवरी मध्य तक होता है। इस काल में ही स्वास्थ्य को अधिक अच्छा करने का मौका होता है। लेकिन सन्धिवात और आमवात से पीड़ित व्यक्ति को इस ऋतु में जोड़ों में जकड़ अधिक महसूस होती है। इन्हें मालिश करके शेफाली (निर्गुण्डी) डालकर उबाले हुए गरम पानी से सेंक कर या गरम ऊनी वस्त्रों से लपेटकर ठंड से बचाना चाहिये। पीड़ित जोड़ों के अनुरूप योग्य व्यायाम करके उन जोड़ों की कार्यक्षमता बनाये रखनी चाहिये। एलर्जी से होने वाली सर्दी, जुकाम इस ऋतु में होती है लेकिन कषाय और कड़वे रस का प्रयोग न करें। शीत, रूक्ष, हल्के अन्न का सेवन न करें। पुराना अन्न, बर्फ, कुल्फी, आइसक्रीम इस ऋतु में कफ को बढ़ावा देकर विकार उत्पन्न कर सकते हैं, अतः इनका त्याग करें। जिन्हें सर्दी, खाँसी बार-बार हो जाती है उन्हें ठंड से पूरी तरह से बचकर रहना चाहिये।

गर्दन के रोग

डॉ. आर.के. शर्मा, लखनऊ

जब कभी पढ़ते या लिखते समय मनुष्य का सिर सीधा नहीं रहता है और विशेषकर सिर की झुकी हुई स्थिति के साथ एक पैर दूसरे पैर पर चढ़ा होता है तब गर्दन के निचले या मध्य भाग में और ग्रीवा क्षेत्र में असहनीय दर्द होता है। यह गर्दन तोड़ बुखार का सूचक होता है। इस प्रकार के दर्द के कई और कारण भी होते हैं जैसे कि प्रेक्षागृह में रंगमंच के बहुत पास या दूर बैठने, दुर्घटना की स्थिति में धक्का लगने, ज्यादा वजन उठाने, अपृष्ठवंशी का बिम्ब (डिस्क) खिसकने या क्षतिग्रस्त होने के कारण गर्दन, स्कन्ध, पीठ और हाथ में तीव्र दर्द होता है। उम्र बढ़ने के साथ रीढ़ की हड्डी सख्त हो जाती है और जोर पड़ने पर गर्दन में दर्द व घुमड़ी महसूस होती है। कभी-कभी अशास्त्रीय ढंग से की हुई मालिश के कारण भी असहनीय पीड़ा का सामना करना पड़ता है। इस दशा में शीर्षासन, हलासन, सर्वांगासन उचित निर्देशन में करना लाभकारी होता है।

ग्रीवा : इस क्षेत्र में सात कशेरुकी अर्ध कंगूरेदार बिम्ब के सहारे एक दूसरे के ऊपर स्थित होती हैं। इसके अन्दर का भाग मुलायम होता है और बिम्ब को बचाने का केन्द्र माना जाता है। कशेरुकी की मोटाई सब जगह एक सी नहीं होती है इसलिए नीचे के तीन मेरूदण्ड को क्षति पहुँचने की ज्यादा सम्भावना रहती है।

उम्र बढ़ने के कारण डिस्क की मोटाई बढ़ जाती है जिसे ऑसटिओपोरिसिस (अस्थि विघटन) कहा जाता है। जब इसकी वृद्धि अकशेरुकी तक हो जाती है तब यह रक्त वाहिका पर दबाव डालती है और इसके कारण स्नायु क्षेत्र में दर्द होता है। जब एक से अधिक स्नायु पर दबाव पड़ता है तब दर्द हाथ में नीचे की तरफ जाता है। जब कभी दर्द अचानक शुरू होता है तो जल्दी खत्म हो जाता है लेकिन प्रायः हल्का दर्द ज्यादा समय तक रहता है। रक्त का समुचित प्रवाह न होने के कारण घुमड़ी आती है। जब कभी प्रभावित मांसपेशी को पर्याप्त रक्त नहीं मिलता तब प्रखर स्थिति में इनका काँपना शुरू हो जाता है और यह सख्त हो जाती है।

गर्दन की रचना

गर्दन में सात हड्डियाँ होती हैं जिनका आकार अंगूठी के समान होता है अर्थात् इन हड्डियों के बीच में एक गोल छेद होता है तथा उसके चारों तरफ उभारनुमा रचना होती है। इन सातों हड्डियों की रचना एक-समान नहीं होती, और ये आपस में क्रम से एक-दूसरे के ऊपर स्थित होती हैं। इनको जोड़ने का काम रस्सीनुमा मांस की रचनाएँ (जिन्हें लिगामेंट कहा जाता है) करती हैं। दो हड्डियों के बीच में एक अवकाश होता है जिसके कारण ही गर्दन चलायमान होती है अर्थात् आगे की ओर या पीछे की ओर झुकती है जिसमें मांस-पेशियाँ भी सहायक होती हैं। इन हड्डियों को ग्रीवा-कशेरुक कहा जाता है।

दैनिक जीवन में सावधानियाँ

- पढ़ने-लिखने के लिए ढाल वाली मेज का प्रयोग करना चाहिए जिससे गर्दन पर कम से कम जोर पड़े। तकिये का प्रयोग करने के सम्बन्ध में कई विचार हैं। लेकिन यदि रोगी को तिरछी तकिया लगाने से आराम मिलता है तो चिकित्सक के सुझाव के अनुसार उसका प्रयोग करें।
- घर का काम सही स्थिति में बैठकर और आँखों को उचित दिशा में रखकर करना चाहिए।
- गर्दन में हल्का दर्द महसूस होने पर थोड़ा आराम करना आवश्यक है।
- गर्म पानी में भीगे तौलिये का अतिरिक्त पानी निकाल कर दस-पन्द्रह मिनट तक बदल-बदल कर प्रभावित क्षेत्र पर रखने से लाभ होता है। सेंकने का तरीका चिकित्सक की सलाह के बाद ही बदलना चाहिए।

पारम्परिक उपचार

महुए के तेल में तारपीन का तेल बराबर के अनुपात में मिलाकर धूप में बैठकर चार-पाँच साल के बच्चे से मालिश करवाना चाहिए। इसके अतिरिक्त निम्न व्यायाम भी लाभ पहुँचाते हैं-

गर्दन के लिए : गर्दन का व्यायाम किसी भौतिक चिकित्सक की सलाह से ही करना चाहिए।

- पहले सीधे खड़े होने के बाद सिर को दाहिने घुमा कर थोड़ी देर रुकना और

इसके बाद सिर बायें घुमाना। यह क्रिया दस से बीस बार करनी चाहिए।

- ऊपर और नीचे देखना।
- सिर बायें और दायें झुकाना।
- एक वृत्त बनाते हुए दोनों तरफ सिर घुमाना।

अगर इस तरह का व्यायाम करने पर रोगी को चक्कर आने लगे तो चिकित्सक से परामर्श करें।

स्कन्ध क्षेत्र के लिए : दोनों कन्धों को ऊपर–नीचे, आगे–पीछे और बायें–दायें घुमाना।

- कोहनी को मोड़कर दोनों हाथों की उंगलियाँ कन्धों पर रखें। इसके साथ ही कोहनी को जितना सम्भव हो पीछे की तरफ दबाएँ।

स्कन्ध और पीठ के लिए : दोनों हाथों को एक–एक करके ९० डिग्री का कोण बनाते हुए ऊपर उठाना और नीचे गिराना, बायें और दायें भी यही प्रक्रिया करना।

- दोनों हाथों को सामने से सिर के ऊपर उठाना और गिराना। इसी प्रकार बगल की तरफ से भी करना चाहिए।
- कोहनी से दोनों हाथों को सीधा रखते हुए आगे और पीछे घुमाना।
- दोनों हाथों को सीधा रखते हुए, कोहनी को दक्षिणावर्त्त और उत्तरावर्त्त दिशा में वक्ष के सामने आड़ रखना।

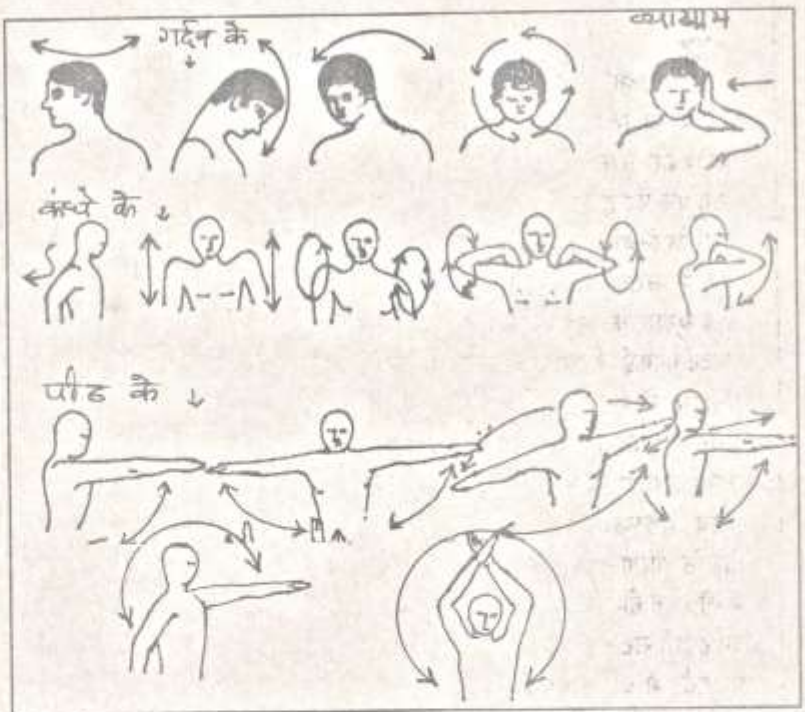

गर्दन का दर्द

डॉ. आर.के. शर्मा, लखनऊ

आज युवावस्था से लेकर वृद्धावस्था तक के लोगों के बीच गर्दन का दर्द काफी देखने को मिल रहा है। जब इस परेशानी को लेकर रोगी चिकित्सक के पास जाता है तो चिकित्सक रोगी की परीक्षा करने के बाद कहता है कि तुम्हारी गर्दन में स्थित हड्डी बढ़ रही है जिसके कारण गर्दन में दर्द हो रहा है।

इस गर्दन के दर्द के प्रमुख कारण निम्न देखने को मिलते हैं :

– गर्दन को सही दिशा में न रखना : अर्थात् सोते समय ज्यादा ऊँचाई के तकिये लगाना या एक साथ दो तकिये का प्रयोग करना। काम करते समय (पढ़ते, लिखते) गर्दन को ज्यादा झुकाकर रखना, तिरछा रखना आदि।

– आमवात के कारण

– गर्दन में स्थित हड्डियों के बीच मौजूद अन्तर का कम हो जाना या बढ़ जाना

– गर्दन की मांस–पेशियों में खिंचाव, तनाव आदि

– गर्दन में चोट लगना

– गर्दन के अलावा, शरीर के दूसरे भाग की विकृति के फलस्वरूप होने वाला दर्द जैसे– कान के कारण, हृदय की विकृति के कारण।

– किसी रोग के उपद्रवस्वरूप जैसे– टिटनस के कारण।

अतः गर्दन में दर्द होने पर योग्य चिकित्सक की सलाह लेना आवश्यक है।

भय का भूत भगाइये

डॉ. अयोध्या प्रसाद अचल, गया

घटना उस समय की है जब स्वामी विवेकानन्द अपने पारिवारिक जीवन में वाराणसी में रह रहे थे। स्वयं उन्हीं के शब्दों में – *मैं एक ऐसे स्थान से गुजर रहा था जिसके एक ओर विशाल जलाशय और दूसरी ओर एक ऊँची दीवार थी। ज़मीन पर बहुत सारे बन्दर बैठे थे। वाराणसी के बन्दर बड़े ही विशालकाय और शैतान होते हैं। उन पर यह भूत सवार हो गया कि मैं उनकी सड़क से न गुजर पाऊँ। उन्होंने घुड़कियाँ दिखाना, चीखना-चिल्लाना शुरू कर दिया और जैसे ही मैं उनके पास से गुजरा वे मेरे पैरों की ओर झपटे। जैसे-जैसे वे मेरे नज़दीक आते गए मैंने दौड़ना शुरू किया। मैं जितनी तेजी से दौड़ता था बन्दर उतनी ही तेजी से मेरी ओर झपटते थे। वे मुझे काटने को दौड़ने लगे। लगा कि इनसे बचकर निकलना असम्भव है। तभी मुझे एक अपरिचित आवाज़ सुनाई दी "इन दुष्टों का सामना करो।" मैं मुड़कर बन्दरों के सामने डट गया। तब वे पीछे हट गए और अन्ततः भाग गए।*

जीवन में अधिकतर ऐसा अनुभव किया गया है कि जब तक हम भय के भय से भागते हैं भय हमारा पीछा करता है और जिस क्षण हम मुड़कर उसका सामना करने के लिए डट जाते हैं वह भाग खड़ा होता है।

यदि हम गौर करें तो पायेंगे कि हमारे भय की अधिकांश जड़ें बचपन में जमती हैं और उनके संस्कार जाने-अनजाने प्रौढ़ावस्था में भी बने रहते हैं। बच्चों में अनेक प्रकार के भय होते हैं। कुछ तो वे अपने अनुभव से सीखते हैं। किसी बच्चे को कुत्ता काट ले तो वह कुत्तों से डरने लगता है। कुछ चीजों से वे दूसरे बच्चों को या बड़ों को डरते देखकर उनसे डरने लगते हैं। जिन चीजों को, जिन लोगों को वे नहीं जानते उनके प्रति भी उनके मन में एक अज्ञात भय उत्पन्न हो जाता है। पर अधिकांश चीजों, लोगों से डरना उन्हें

सिखाया जाता है – यथा आग से, पानी से, कीड़े-मकोड़ों से, अंधेरे से, जानवरों से, डॉक्टर से, मास्टर से, पुलिस आदि से। बड़ों में से अधिकांश चाहे वे अभिभावक हों या शिक्षक नकारात्मक ढंग से बच्चों को डरा-धमका कर उनसे अपने मनोनुकूल काम कराना, अनुशासन सिखाना सबसे आसान समझते हैं। वे नहीं जानते कि बच्चे पर इसका असर कितना व्यापक होता है। डॉक्टर का/उसकी सूई का डर बच्चे में वहाँ की नर्सों/क्लीनिक यहाँ तक कि वहाँ की गंध के प्रति भी डर उत्पन्न कर सकता है। शिक्षक का डर किताबों के प्रति/स्कूल के प्रति यहाँ तक कि पढ़ाई के प्रति भी डर उत्पन्न कर सकता है। डरावनी बातें, डरावने किस्से-कहानियाँ, डरावनी शक्ल के खिलौने, डरावना साहित्य, डरावने चलचित्र, डरावने टी.वी.सीरियल आदि भी डर एवं आतंक पैदा करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं।

आगे चलकर जैसे-जैसे बच्चा बड़ा होता जाता है और अपने को भयभीत दिखलाने में हीनता का अनुभव करने लगता है तो अनेक भय घृणा या नफरत का रूप धारण कर लेते हैं। डॉक्टर का भय डॉक्टर से इलाज से नफरत में बदल जाता है। मास्टर का भय पढ़ाई से नफरत का रूप धारण कर लेता है। फिर यह नफरत उसमें विरोध-प्रदर्शन और नकारात्मक व्यवहार को जन्म देती है। इतने पर भी यदि उसको समझने की कोशिश नहीं की गई और उसके साथ ज़ोर-ज़बरदस्ती की गई तो उसमें अपने अभिभावकों के प्रति भी घृणा का, विरोध का भाव उत्पन्न हो जाता है। वह इस सारे परिवेश में अपने को असुरक्षित महसूस करने लगता है। इनसे कहीं दूर भागने की कोशिश करता है। कहाँ? यह वह खुद नहीं जानता।

बच्चे तो बच्चे, बड़ों के द्वारा भी अपनी बात मनवाने के लिए, अपना काम कराने के

लिए भय का सहारा लेना एक आम बात है। अधिकांश धर्मगुरु पाप का, नरक का, नरक की यातनाओं का, शाप का भय दिखाकर अपनी बात मनवाने की कोशिश करते हैं। नेता असुरक्षा का भाव पैदा करके अपने अनुयायियों को अपने पक्ष में आने को बाध्य करते हैं। शासक शासन का भय दिखाकर जनता को अनुशासित बनाए रखने की कोशिश करते हैं। सब "भय बिन होय न प्रीति" वाले नुस्खे को ही सबसे आसान नुस्खा समझते हैं।

लेकिन भय का अपना एक सकारात्मक पक्ष भी है। इससे आदमी बहुत कुछ सीख सकता है, बहुत से गलत काम करने से बच सकता है तथा अनेक खतरों से सावधान हो सकता है और ऐसा होता भी है। पर इसका इस्तेमाल करनेवाले अपने अज्ञान को छिपाने के लिए, अपने निहित स्वार्थ की पूर्ति के लिए प्रायः सीमा का उल्लंघन करने लगते हैं – यही सबसे बड़ी त्रासदी है।

कुछ भय तो असामान्य भय या दुर्भीति (फोबिया) का रूप धारण कर लेते हैं। यथा पानी से भय। पानी की दुर्भीति से पीड़ित व्यक्ति पानी मात्र को देखकर डरने लगता है। जहाँ नदी में सब नहा रहे हैं वह वहाँ नदी में प्रवेश करने से भी डरता है। इसी तरह कुछ लोगों में बन्द जगहों से, कुछ में ऊँची जगहों से, कुछ में आग से, कुछ में पालतू जानवरों से या किसी जानवर विशेष से, कुछ स्त्रियों में पुरुषों से तथा पुरुषों में स्त्रियों से भय उत्पन्न हो जाता है। ऐसे लोग जिन चीजों के प्रति उनमें दुर्भीति होती है उनका किसी भी रूप में सामना करने से घबड़ाते हैं। क्यों घबड़ाते हैं – यह अधिकांश मामलों में वे खुद भी नहीं जानते हैं। बहुत तंग करने पर हो सकता है वे जान बचाने के लिए कोई कारण गढ़कर बता दें। मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि अधिकांश दुर्भीतियों के कारण प्राणी के अचेतन मन में दबे रहते हैं और वहीं रहकर, प्राणी के अनजाने ही उसके व्यवहार को प्रभावित करते रहते हैं। बाल्यावस्था में बच्चे को आतंकित करनेवाली अनेक ऐसी घटनाएँ घटती हैं जो दबकर उसके अचेतन मन में चली जाती हैं। उनकी पीड़ा को तो वह भूल जाता है पर अहसास एवं व्यवहार ताज़िन्दगी उसमें बना रहता है।

भय मन को तो झकझोरता ही है साथ ही शरीर पर भी अपना प्रतिकूल प्रभाव डालता है। भय व्यक्ति की मुद्रा से, आकृति से, हाव–भाव से स्वतः प्रकट होने लगता है। उसके चेहरे का रंग फीका पड़ जाता है। साँस की गति तेज़ हो जाती है या रुकने सी लगती है। भूख मर जाती है। मुँह सूखने लगता है। अन्तःस्रावी ग्रन्थियों के कार्य में असन्तुलन आ जाता है। रक्त में विषाक्तता आने लगती है। सतत बने रहने वाले भय या दुर्भीति में ये शारीरिक परिवर्तन रोगों का रूप धारण कर लेते हैं। भय चिन्ता को जन्म देता है, चिन्ता घबराहट और थकावट को और ये घबराहट और थकावट प्राणी को भय के प्रति और भी सुग्राह्य बना देते हैं। चिन्तित और थके–हारे व्यक्ति को असाधारण अघट घटना भी डरा देती है। उसका दिल तेज़ी से धड़कने लगता है। यह दुश्चक्र प्राणी के मनोदैहिक स्वास्थ्य के लिए बड़ा ही घातक होता है।

भय के भूत से बचने के लिए कुछ सरल उपाय हैं जैस कि सबसे पहले आप अपने बच्चों को डराना बन्द कीजिये। अपने बात मनवाने के लिए, मनोनुकूल काम कराने के लिए उन्हें डराना–धमकाना बन्द कीजिये। शान्त मन से, धीरज के साथ उनको, उनकी समस्याओं को, उनकी कठिनाइयों को समझिये और उनका विवेकपूर्ण हल निकालिए। उनके विवेक पर, सूझ पर भरोसा रखिये। उन्हें समझाने की कोशिश कीजिए। न समझ रहा हो तो पहले तो यही देखिए कि कहीं आपके समझाने में ही तो कोई खोट नहीं है। अगर है तो अपने को बदलिए। उन्हें भय का, समस्या का सामना करने के लिए प्रोत्साहित कीजिए। हार का, असफलता का भय उनके मन से निकालिए। असफलता सफलता की जन्मदात्री है। यह मानना उचित है कि जो डर से घोड़े पर चढ़ेगा ही नहीं वह उसपर चढ़ना सीखेगा कैसे।

इसके लिए सबसे पहले अपने भय के बारे में ठण्डे दिमाग से सोचिए। उसका विवेकपूर्ण हल निकालिए। उसका सामना करने के लिए अपने को तैयार कीजिए। फिर दृढ़तापूर्वक सामना कीजिए। आपका उत्साहपूर्वक आगे बढ़ा हर कदम भय को पीछे छोड़ता जायेगा। नव युवकों के लिए सलाह है कि यदि आप छात्र हैं तो स्वास्थ्य बनाइये, मन लगाकर पढ़िये, व्यवस्थित ढंग से परीक्षा की तैयारी कीजिए और परीक्षा दीजिए। परीक्षा से आपका भय दूर हो जायेगा। इन्टरव्यू हव्वा मालूम होता है इसलिये इन्टरव्यू देना शुरू कीजिए। प्रतियोगिता परीक्षाओं से डरते हैं इसलिए प्रतियोगिता परीक्षाएँ देना शुरू कीजिए। आपका भय निकल जायेगा। हाँ, यह जरूर है जो कुछ भी कीजिए पूरी तैयारी के साथ पूरी दृढ़ता के साथ, पूरी ईमानदारी के साथ कीजिए। सफलता आपके कदम चूमेगी और भय का भूत भाग जाएगा यहाँ ऐसा कहना उचित होगा।

समस्या वैयक्तिक हो या सामाजिक, घर की हो या बाहर की, पारिवारिक हो या व्यवसाय सम्बन्धी – जो भी हो जैसी भी हो

शेष पृष्ठ ११ पर

मुख के छालों की देशी दवाएँ

डॉ. चरनजीत सिंह सैम्बी, लखनऊ

आज की वैज्ञानिक प्रगति ने हमें जीवन के विभिन्न सन्दर्भों में बहुत सी शीघ्र–प्रभावी और आरामदायक सुविधाएं उपलब्ध करायी हैं। चिकित्सा विज्ञान तो इसका ऐसा उदाहरण है जिससे हर खास–ओ–आम का रोज का वास्ता है। बहुत सी तकलीफों में मरीज़ को डॉक्टर तक पहुँचने की देर होती है, बस फिर एक गोली या "इंजेक्शन" में सारा दुःख दूर। लेकिन कई बार इनके उल्टे असर (रिएक्शन या साइड इफेक्ट्स) से मरीजों को दूसरी बीमारियाँ होने लगती हैं। इनके बारे में लगातार प्रयोग करके ऐसी दवाओं की खोज की कोशिश की जाती हैं जिनसे मर्ज़ ठीक हो जाये और दवा का उल्टा असर भी न पड़े।

असल में हर मामले में पश्चिम से मिली जानकारी को ही तरजीह देने और अपनी जड़ों को भूलते जाने से ऐसा अधिक हो रहा है। हमें एक मामूली सी बात पर ध्यान देना चाहिये कि जब तक यह नयी चिकित्सा नहीं थी, हमारे यहाँ क्या इलाज हो रहे थे? वे कितने फायदेमन्द थे और आज के विज्ञान की कसौटी पर वे कितने खरे हैं? उनमें से जो काम के हों उन्हें दोनों हाथ से स्वीकार करने में क्या हर्ज है?

देखा गया है कि लम्बे समय से हमारे बुजुर्गों ने आजमाइश दर आजमाइश के बाद इलाज़ के जो तरीके ईजाद किये थे वे आज के विज्ञान की परीक्षा में भी अक्सर पूरे नम्बर पाते हैं। इनसे मरीज़ ठीक हो जाते हैं और उल्टा असर भी नहीं पड़ता। इसलिये अगर आज के डॉक्टर पुराने नुस्खे भी आजमा कर देखें तो पुराने और नये के मेल से खासे असरदार और अच्छे नतीजे मिल सकते हैं। इसी नजरिये से "मुँह के अल्सर" के इलाज के लिये परम्परागत दवाओं में प्रयोग किये जा रहे गेरू, कत्थे, तूतिया, फिटकरी और हंसराज आदि को मिलाकर बनायी गयी एक दवा की आजमाइश और उसके शत–प्रतिशत प्रभावी होने का विवरण इस लेख में प्रस्तुत किया जा रहा है। इन तत्वों के औषधि सम्बन्धी गुणों का उल्लेख "भाव प्रकाश निघण्टू" जैसे प्राचीन संस्कृत– ग्रन्थों में जगह–जगह किया गया है।

मुख शरीर का बहुत ही उपयोगी अंग होने के अलावा शरीर का "मुख्य द्वार" भी है। यदि इसमें कोई रोग होता है तो उसका समस्त शरीर पर असर पड़ता है। मुख में मुख्यतः पायरिया, दन्तक्षय, व अल्सर होते हैं। इस लेख में मुख में होने वाले अल्सर के बार में ही चर्चा की जायेगी।

मुख के अल्सर के बारे में यह आम धारणा है कि यह ज्यादातर पेट में खराबी होने से तथा विटामिन की कमी के कारण होते हैं। इसके होने पर व्यक्ति आमतौर पर पेट का इलाज तथा विटामिन की दवाई लेना शुरू करता है, जिससे कुछ समय बाद आराम आ जाता है। मरीज़ यह समझता है कि पेट ठीक होने से या विटामिन की कमी पूरी होने से मुँह का अल्सर ठीक हो गया है।

वैज्ञानिकों का मत है कि ये अल्सर मानसिक तनाव से होते हैं। इसलिये प्रायः देखा गया है कि जब विद्यार्थियों को परीक्षा का तनाव होता है तो इस प्रकार का अल्सर होता है जो ८–१० दिन में स्वयं ठीक हो जाता है। परन्तु जब तक यह अल्सर मुँह में बना रहता है तब तक काफी दर्द होता है। जैसे–जैसे यह ठीक होने लगता है दर्द भी कम होता जाता है। इस प्रकार के अल्सर मुख में ओंठ और गाल के अन्दर की सतह, जीभ के नीचे तथा गाल और मसूड़ों के नीचे की सतह पर होते हैं। बहुत से वैज्ञानिकों का यह मत है कि ऐसा "इम्यून सिस्टम" में गड़बड़ी के कारण से होता है। अतः इनका कोई खास इलाज़ सम्भव नहीं हो सका है।

प्रयोग विधि तथा सामग्री

मुख के छालों की दवाई के परीक्षण के लिये केवल उन्हीं मरीज़ों को लिया गया जिनके मुख में छाले केवल एक या दो दिन पहले हुए थे। छाले मुख में किसी भी जगह पर हुए हों बिना किसी अन्तर के उन मरीज़ों को परीक्षण के लिये दवा दी गयी। छालों के लिये प्रयोग की गयी दवा के तत्व निम्न प्रकार हैं :

गेरू	–	१.०६ ग्राम
कत्था	–	.०८
शोधित तूतिया	–	.३२
फिटकरी	–	.४८
हंसराज	–	.०८
कोसह फल	–	.०८
गावजवान	–	.०८

छीडरा फल	–	.०८
इलायची छोटी	–	.०३
कोरी लरीट	–	.१६

सबसे पहले उपरोक्त में से तूतिया को छोड़कर, अन्य तत्वों को कूट-पीसकर छान लिया गया तथा ऊपर दी गयी मात्रा के हिसाब से आपस में मिला लिया गया। उसके उपरान्त तूतिया को आग के ऊपर गर्म करके खिल जाने पर उपरोक्त तत्वों के मिश्रण में मिला देने के बाद मरीजों को लगाने के लिये दिया गया। इस प्रकार ३० मरीज़ों के ऊपर इसका परीक्षण किया गया।

मरीज़ों को पाउडर के रूप में उपर्युक्त दवा (३ ग्राम) एक छाले पर लगाने के लिये दी गयी। इसमें से तकरीबन ५०० मि.ली. पाउडर छाले पर एक बार सुबह और एक बार शाम को लगाने के निर्देश दिये गये। मरीज़ों को सलाह दी गयी कि ७ दिन बाद आकर अपने छालों की स्थिति का निरीक्षण कराने तथा दवा लेने के लिये आयें इस प्रकार जब-जब मरीज़ आये, उनके छालों का परीक्षण किया गया। उनसे पूछ कर नोट किया गया कि छाले कब ठीक हुए तथा दवा से शरीर पर किसी भी प्रकार की "एलर्जी" या दुष्परिणाम तो नहीं हुआ।

परिणाम

छालों की दवा के परिणाम को तालिका में दिखलाया गया है जिससे यह पता लगता है कि छाले (अल्सर) के ३० मरीज़ों में से १० मरीज़ दो बार दवा के प्रयोग से ३ दिन में ठीक हो गये तथा चौथे दिन तकरीबन १५ मरीज़ ठीक हो गये, ५ दिन में २५ और ६ दिन में सभी मरीज़ स्वस्थ हो गये।

इस दवा के बारे में सभी का यह कहना था कि शुरू-शुरू में दवा लगती है थोड़ी देर बाद लगना ठीक हो जाता है। इसके अतिरिक्त और किसी प्रकार के प्रतिकूल प्रभाव न तो देखने में आये और न किसी मरीज़ ने इस बारे में कुछ कहा। अतः यह दवा प्रतिकूल प्रभावों (साइड इफेक्ट्स) से पूर्णतः मुक्त मानी गयी।

मरीज़ों की क्रम संख्या	इलाज़ के पहले अल्सर का प्रभाव	अल्सर पर दवा का प्रतिदिन का प्रभाव						
		१	२	३	४	५	६	७
१	--	--	--	०	०	०	०	०
२	--	--	--	०	०	०	०	०
३	--	--	०	०	०	०	०	०
४	--	--	--	--	--	०	०	०
५	--	--	--	०	०	०	०	०
६	--	--	--	--	०	०	०	०

पृष्ठ ९ का शेष

भय का भूत ....

उससे डरकर भागिए नहीं। उसका डटकर मुकाबला कीजिए।

अपने व्यक्तित्व का सर्वतोमुखी विकास कीजिए इसके लिए कुछ सुझाव हैं। जहाँ अस्वस्थता है, मन की चंचलता है, अज्ञान है, अन्धविश्वास है, परनिर्भरता है, बुज़दिली है, प्रमाद है वहीं भय है। इन सबको अन्दर से निकाल फेंकिए। स्वस्थ बनिए, शान्त एवं धैर्यवान बनिए, दृढ़ बनिए, संकल्पवान बनिए, आत्मविश्वास बढ़ाइये, आत्मनिर्भर बनिए, सक्रिय बनिए, जो परिस्थिति सामने आए उसका पूरे आत्मविश्वास और दृढ़ता के साथ मुकाबला कीजिए। भय अपनेआप भाग जायेगा।

स्वामी विवेकानन्द ने कहा है – "भय ही संसार में दुःखों का, दुर्गति का सबसे बड़ा कारण है। भय ही सबसे बड़ा अविश्वास है। भय ही विषादों का कारण है और निर्भयता क्षणभर में ही स्वर्ग को पृथ्वी पर ला देती है।"

वृद्धावस्था में भी लाभकारी

सूर्य नमस्कार

यूँ तो आयु के बढ़ने के साथ धीरे–धीरे कम थकाने वाले व्यायाम ही करने की सलाह दी जाती है पर सूर्य नमस्कार योगासनों की ऐसी श्रृंखला है जो वय व शक्ति के अनुसार कम या अधिक श्रम वाली हो सकती है। जहाँ युवाओं को चाहिये कि सूर्य नमस्कार की सारी क्रियाएं यथाशक्ति शीघ्रता से व कई बार (१५–२५ बार तक) करें वहीं ढलती आयु में यही क्रियाएं कुछ धीरे–धीरे करते हुए ५–६ बार कर लेना ही काफी होता है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि सूर्य नमस्कार का अभ्यास करने के बाद अन्य कोई भी आसन या व्यायाम किये बिना मनुष्य बुढ़ापे में भी स्फूर्ति का अनुभव करता रह सकता है। अलबत्ता गर्भावस्था तथा मासिक धर्म के दिनों में स्त्रियों को इन क्रियाओं से बचना चाहिये। पीठ के दर्द के दौरान भी कुशल चिकित्सक की सलाह के बिना ये आसन नहीं करने चाहिये।

(सम्पादक)

वैसे तो सूर्य नमस्कार महज आसन एवं व्यायाम ही नहीं है अपितु जैसा नाम से ही स्पष्ट है, साधना का भी एक महत्वपूर्ण अंग है। प्रातः ब्राह्म मुहूर्त में उठकर सूर्य देव की वन्दना से शक्ति के आदि स्रोत से शक्ति लेने की भावना से ये १० आसन क्रियाएं करनी चाहियें। सूर्य नमस्कार की कुल १२ अवस्थाओं से शरीर के अंग प्रत्यंग का व्यायाम हो जाता है।

सूर्य नमस्कार हमेशा खुले और स्वच्छ स्थान पर बिना थके करना चाहिये। थकने पर थोड़ा आराम करना चाहिये। सूर्य नमस्कार करते समय हर बार पैर बदलते रहना चाहिये। ताकि प्रत्येक पैर का व्यायाम हो सके।

प्रत्येक सूर्यनमस्कार में दस आसन होते हैं:–

अवस्थानं जानुनासं ततश्चोर्ध्वनिरीक्षणम् ।
वपुस्तुलितपूर्वं च साष्टांग नमनं परम् ।।
कशेरोर्विस्तरस्ततः ।
पुनरूर्ध्वेक्षणादीनां व्युत्क्रमः क्रमशो भवेत्।
इत्येतैरासनैः कुर्यात् सूर्यस्योपासनं नरः ।।

अर्थात् प्रथम आसन अवस्थान (खड़े होना), दूसरा जानुनास (नाक को घुटने से लगाना), तीसरा ऊर्ध्वेक्षण (ऊपर की ओर देखना), चौथा तुलितवपु (शरीर को सधा हुआ रखना), पांचवां साष्टांग (दण्डवत् करना), छठा कशेरुसंकोच (पीठ को मोड़ना), सातवां कशेरुविस्तार (पीठ को तानना), आठवां पुनः ऊर्ध्वेक्षण, नवां जानुनास और अंतिम अवस्थान है।

सूर्य नमस्कार करने की विधि

१: सूर्योदय के समय सूर्य की ओर मुँह करके शांत चित्त से सीधे खड़े होकर एड़ियाँ आपस में मिला लें। आगे से पंजे अलग रखें तथा हाथ नीचे लटके रहें। सीना तना हुआ, आँखें सामने की ओर। इसे "ताड़ासन" कहा जाता है।

इस आसन से कमर के रोग दूर होते हैं। पीठ मज़बूत होती है। पैर सजग होते हैं तथा एकाग्रता बढ़ती है।

२: हाथ को नमस्कार की मुद्रा में जोड़कर अंगूठे छाती से लगाकर पेट को अन्दर खींचकर कुंभक कर सीना तना रखें। इसे "नमस्कारासन" कहते हैं। इस आसन से स्वर साफ होता है व गले के रोग मिटते हैं।

३: कुंभक जारी रखें, अब दोनों हाथ जितने ऊपर ले जा सकें, ऊपर ले जाकर शरीर पीछे की ओर झुकाएँ। खुली आँखों से आकाश देखिये। इसे "पर्वतासन" कहते हैं।

इससे आँख की नसों में शक्ति आती है और कंधों के दोष दूर होते हैं।

४: अब दोनों हाथ नीचे लाकर उंगलियों से पैरों के अंगूठे छुएँ पर घुटने न मुड़ने पाएँ। कुंभक छोड़ते समय नाक से घुटनों को छूकर आवाज़ के साथ रेचक कीजिये। साँस नाक से ही छोड़ें। इसे "हस्तपादासन" कहते हैं।

इससे उंगलियाँ, हाथ, छाती मज़बूत बनते हैं, पेट को भी शक्ति मिलती है।

५: नाक से आवाज़ के साथ साँस खींचें, बाँया पैर आगे ले जाएँ। दायाँ पैर पीछे तानें, पंजों के बल पर रहें। घुटना ज़मीन छुए। दूसरी बार यही क्रिया दाएँ पैर से करें। सिर उठाकर अधिक से अधिक ऊपर देखें। इसे "एकपाद प्रसरणासन" कहते हैं। इससे कब्ज़ और यकृत के रोगों में लाभ होता है।

६: दोनों हाथ सामने की ओर ज़मीन पर जमाइये। उंगलियाँ सामने की ओर रखकर कूल्हे अधिक से अधिक ऊँचे उठाइये (कुंभक जारी रहे) इसे "भूधरासन" कहते हैं। इससे घुटनों, हाथ, पैर के दर्द मिटते हैं। कमर पतली होती है, पेट के करीब-करीब सभी रोगों में लाभ पहुँचता है।

७: कुंभक जारी रखते हुए हाथों पर सारे शरीर का भार डालिये व कुहनियाँ मोड़िये। ललाट और सीना ज़मीन को छूते हुए शरीर को भूमि के समतल लाइये। नाक और पेट ज़मीन को स्पर्श न करें। अब पूर्ण रेचक कीजिये। इसे "अष्टांग प्रणिपातासन" कहते हैं। यह हाथों को शक्ति देता है।

८: सिर और छाती को ऊपर ले जायें। साँस भीतर खींचते हुए सीना बाहर की ओर रखें व कुंभक कीजिये। शरीर का भार हाथों पर रहे। ऊपर देखिये फिर कुंभक कीजिये। इसे "भुजंगासन" कहा जाता है। यह शरीर में खून का दौरा नियमित करता व बढ़ाता है। आँखें चमकदार होती हैं, स्त्रियों के मासिक धर्म को नियमित करता है। रज ओर वीर्य की सभी त्रुटियों को दूर करता हे।

९: कुंभक जारी रखें। हाथ और पैर ज़मीन में जमाइये। कूल्हे ऊपर उठाइये। ठोड़ी सीने से सटाइये। पेट अन्दर रहे।
इस आसन से जोड़ों का दर्द (सन्धिवात) होने का डर जाता रहता है व पैर मज़बूत हो जाते हैं।

१०: भूमि पर बैठकर बायीं टांग आगे, दायीं टांग पीछे करके उसे अधिक फैलाएँ। दोनों हाथों की उंगलियों से आगे वाले पैर को छूने का प्रयत्न करें। गर्दन दोनों बाँहों के बीच ऊपर की ओर रहे। पेट पूरी तरह दबना चाहिये। अब दाँयी टांग आगे लाएँ, बाँयी टांग पीछे ले जाएँ। दोनों टांगों को अधिक से अधिक फैलाएँ, दोनों हाथों की उंगलियों से आगे वाले पैर को छूने का प्रयत्न करें। इसे "एकपाद प्रसरणासन" कहते हैं। इससे पैरों की शक्ति व रक्तप्रवाह बढ़ता है। मेरुदण्ड लचीला होता है।

११: पेट भीतर खींचकर दोनों पैर जोड़िये। नाक घुटनों पर लगाइये। आवाज़ के साथ रेचक कीजिये, इसे "हस्तपादासन" कहते हैं। इससे उंगलियाँ, हाथ, छाती मज़बूत बनते हैं। पेट को भी शक्ति मिलती है।

१२: ध्वनि के साथ पूरक कीजिये। सीधे तनकर पैर और घुटने जोड़कर खड़े हो जाइये। हाथ नमस्कार की मुद्रा में छाती से सटाकर रखिये। यह पहले बताया "नमस्कारासन" ही है।

सूर्य नमस्कार के लाभ

– शीतकाल में सूर्य नमस्कार का अभ्यास करने से सर्दी, जुकाम, खाँसी आदि रोग पास नहीं आते व चेहरा तेजस्वी बनता है।

– नेत्रों की ज्योति बढ़ती है। पेट के रोगों का नाश होता है तथा कंधों को शक्ति मिलती है।

– मन एकाग्र होता है।

– मेरुदण्ड में लचीलापन आता है तथा मांसपेशियाँ सबल होती हैं, रक्त संचरण तथा श्वास-प्रश्वास तेज़ होकर श्वास संस्थान की बीमारियों का नाश होता है।

– स्नायु तन्तु मज़बूत तथा पुष्ट होते हैं।

– शरीर में तेज-ओज-कांति बढ़ती है। उत्साह आता है।

हमें आशा है कि हमारे बाल-युवक-वृद्ध सभी पाठक सूर्य नमस्कार के नियमित अभ्यास से लाभ उठाकर अपने शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य का पूर्ण लाभ उठाते हुए सूर्य देव की तरह कांतिवान व नित्य शक्तिशाली रह सकेंगे।

वृद्धावस्था दिनचर्या

वैद्य र.म. नानल, मुंबई

पाठकों के मन में यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि वृद्ध तो वृद्ध होता है, फिर उसमें प्रकार कैसे? और प्रकार की सापेक्षता से दिनचर्या कैसे? जी हाँ! योग्य ही नहीं अपितु अति विचारणीय प्रश्न है। आयुर्वेद की दृष्टि में हर एक वृद्ध समान नहीं होता। आयुर्वेद तो प्रत्येक "व्यक्ति" को देखकर विचार करने का आग्रह करता है। क्योंकि हर एक व्यक्ति की प्रकृति भिन्न-भिन्न ही होती है। इसीलिये उसका विचार भी विभिन्न स्तरों पर ही होना चाहिये। परन्तु यदि शब्दशः यह देखना-करना हो तो फिर कोई भी बात लिखना असम्भव अथवा अतिकष्टदायक होगा। इसीलिये कुछ "सामान्य" नियम बनाकर उनके आधार से "विशिष्ट नियमों" का निर्णय करना, यह उचित प्रथा है।

वृद्धों के प्रकार

"वृद्धता" की सामान्यता होने से सभी वृद्ध समान ही होंगे। फिर भी वृद्धता के अतिरिक्त कई बातों को विचार में लेना अत्यावश्यक हो जाता है। क्योंकि उनके अपने-अपने वैशिष्ट्य होते हैं और इन वैशिष्ट्यों के आधार पर ही दिनचर्या का विचार भी बदलता है। सर्वप्रथम हम वृद्ध प्रकार देखेंगे तदनन्तर सापेक्ष दिनचर्या का कुछ संक्षिप्त उदाहरण देखेंगे। वर्गीकरण के और भी प्रकार सम्भव हैं। परन्तु विस्तारभय से इतने ही तक सीमित रखें।

भेद	अर्थ
लिंग भेद	स्त्री अथवा पुरुष
अवस्था भेद	रोगी अथवा निरोगी
प्रकृति भेद	वात प्रधान, पित्त प्रधान, कफ प्रधान आदि
अग्नि भेद	तीक्ष्णाग्नि-मन्दाग्नि-विषमो ग्नि
बल भेद	हीन – मध्यम – उत्तम बल
सांपत्तिकास्थिति भेद	सम्पन्न – दरिद्र
कौटुंबिक परिस्थिति भेद	सपत्नीक – विधुर – ब्रह्मचारी
व्यवसाय भेद	शारीरिक – मानसिक, शरीर-मानस, कष्टदायक व्यवसाय।

वृद्धावस्था दिनचर्या क्या हो?

दिन में करने वाले कार्यों के नियमों के उचित पालन को ही दिनचर्या कहते हैं इनके नियमों का असम्यक योग अनेक रोगों का कारण होता है। यह स्वयं स्वतन्त्र ग्रन्थ का ही विषय है। इनमें हर एक व्यक्ति के लिये सभी क्रियायें सामान्य हैं फिर भी "विधि एवं निषेध" में व्यक्तिशः विचार आवश्यक होता है। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं।

सुबह किस समय उठना चाहिये ? (सामान्यतः ब्राह्ममुहूर्त पर उठना है) इस प्रश्न का उत्तर पूर्वोक्त भेदों के आधार पर बदला जाता है।

रोगी : अवस्था में रोग पर निर्भर करता है। जैसे वात के रोगी को सूर्योदय तक सोना चाहिये। कफ के रोगी को बड़ी सुबह उठना है।

प्रकृति भेद : वात प्रकृति के पुरुष को अधिक समय तक सोना चाहिये क्योंकि बुढ़ापे में वात का प्राबल्य होता है एवं ब्राह्ममुहूर्त भी वात काल ही है। इसीलिये वात प्रकृति वाले को सूर्योदय तक सोना इष्ट होता है तथा रात्रि जागरण करना अनिष्ट होता है। कफ प्रकृति के वृद्ध को प्रातःकाल सूर्योदय के पहले ही उठना चाहिये। परन्तु वृद्धत्व को ध्यान में रखकर हर एक वृद्ध को कम से कम ६-८ घण्टे की नींद प्रति चौबीस घण्टे लेनी चाहिये।

व्यवसाय भेद : शारीरिक एवं शारीमानस कार्य करने वाले वृद्ध को सूर्योदय तक सोना चाहिये। मानस श्रम करनेवाले वृद्ध को सूर्योदय के पूर्व उठना एवं ध्यान-पूजा इत्यादि करना लाभदायी होता है।

कुछ इस प्रकार से हर एक दिनचर्या का विचार भिन्न-भिन्न हो सकता है। कोई-कोई क्रियायें नियमित रूप से अधिक जोर देकर करनी चाहिये, जैसे अभ्यंग। कोई क्रियायें नहीं करनी चाहिये जैसे धूम्रपान, तीव्र व्यायाम। कोई क्रियायें विशेष सावधानी पूर्वक करनी चाहिये, जैसे अंजन-नस्य। इन सबको सविस्तार लिखना स्वतन्त्र लेखों का विषय है। आइये कुछ महत्वपूर्ण दिनक्रमों का विचार करें।

निद्रा विचार

बुढ़ापे के शरीर में वात का प्राबल्य होने से बहुतांश वृद्धों को नींद कम आती है। परन्तु नींद लेना अनिवार्य होता है क्योंकि नींद को "भूत धात्री" अर्थात् "जीवों का रक्षण करनेवाली" समझा जाता है। योग्य निद्रा के कारण व्यक्ति को सुख, पुष्टि, बल, वृषता (मानसिक हर्ष – मैथुनशक्ति), बुद्धि–ज्ञान एवं जीवन की प्राप्ति होती है। अन्यथा दुःख, कृशता इत्यादि सभी विपरीत भावों की प्राप्ति होती है। यहाँ तक कि मृत्यु भी सम्भव है।

रात्रि में जागने से शरीर में रूक्षता आती है और दिन में सोने से स्निग्धता का निर्माण होता है, यह सार्वकालिक नियम है। इसी के आधार पर हम यह समझ सकते हैं कि वात प्रधान प्रकृति, वात प्रधान रोग, वार्धक्य – वात प्रधान वय तथा वात प्रधान ऋतु में रात्रि जागरण निषिद्ध होता है तथा दिन में युक्तिपूर्वक सोना उचित होता है।

वात प्रधान रोगी या प्रकृति में : रात्रि जागरण पूर्ण निषिद्ध; दिन में सोना उपकारी है। विशेषतः स्त्री वर्ग को।

निर्बल व्यक्ति को : दिन में सोना उपकारी, रात्रि जागरण अपकारी

शारीरिक श्रमी को : रात्री जागरण निषिद्ध, दिन निद्रा उपकारी।

तीक्ष्णाग्नि में : रात्रि जागरण त्याज्य, दिन निद्रा अधिक चाहिये।

आहार विचार

अब इस के बाद "आहार" (आहार – पूर्ण भोजन) के विषय में कुछ महत्वपूर्ण विचार देखें। इसमें मुख्यतः विचारणीय बातें निम्न हैं–

१. कितनी बार आहार लेना, २. समय निर्धारण कैसे करें?, ३. असमय खाने से दुष्परिणाम, ४. योग्य अन्न के सुपरिणाम, ५. "रसायन" अभ्यास, ६. आहार प्रमाण, ७. रस कौन सा अधिक हो, ८. पानी पीना, ९. आहार सेवन के बाद क्या करें, १०. कौन से द्रव्यों का अधिक प्रयोग सतत् करें। इन प्रश्नों के क्रमशः उत्तर देखेंगे।

कितनी बार आहार लेना चाहिये ? (एक बार पूर्ण भोजन करना पाचन की दृष्टि से श्रेष्ठ होता है।)

याम मध्ये न भोक्तव्यं याम युग्मं न लंघयेत्। यो.रत्नाकर

याम का अर्थ तीन घण्टे होता है। तीन घण्टे के भीतर पुनः आहार ग्रहण न करें और छः घण्टे के बाद भूखे न रहें कुछ न कुछ जरूर खाना चाहिये। यह सामान्य नियम है। विशिष्ट विचार कुछ ऐसे हैं–

- शारीरिक श्रमजीवी व्यक्ति को अधिक बार खाने की आवश्यकता।
- तीव्राग्नि व्यक्ति को अधिक बार खाने की आवश्यकता।
- पित्त प्रधान प्रकृति के व्यक्ति को बारंबार खाने की आवश्यकता।
- बलवान व्यक्ति को अधिक बार खाने की आवश्यकता।
- बैठा काम करने वालों को दो बार किंवा एक बार पूर्ण आहार पर्याप्त है।
- मन्दाग्नि में एक बार आहार पर्याप्त है।
- कफ प्रकृति में एक बार आहार पर्याप्त हो सकता है।

आहार लेने का समय कौन सा हो?

आयुर्वेद ने "घड़ी के अनुसार" आहार लेने का समय नहीं दिया है। मल, मूत्र का सुलभ प्रवर्तन होने पर, मन प्रसन्न होने पर, दोषों को स्वमार्ग में प्रवृत्त होने पर, शुद्ध डकार आने पर, भूख प्रतीत होने पर, वायु का अनुलोमन होने पर, अग्नि के प्रदीप्त होने पर, इन्द्रियाँ निर्मल होने पर तथा शरीर में हल्कापन प्रतीत होने पर विधि पूर्वक आहार का सेवन करें क्योंकि आहार सेवन का यही ठीक समय है। अर्थात् इन सब बातों का "अनुभव" वृद्ध स्वयं ही कर सकता है। किसी अन्य व्यक्ति द्वारा यह जान लेना असम्भव है। इसीलिये चरक लिखते हैं; *"आत्मानं अभि समीक्ष्य भुंजानं"*। (च.वि.१) अर्थात् स्वयं को अच्छी तरह परीक्षण कर खाना चाहिये। यह सुवर्ण वाक्य सर्वार्थ से सम्पन्न है। इसके अतिरिक्त प्रथम प्रश्न के समान "समय" की सामान्य एवं विशिष्ट कल्पना प्रयुक्त कर ही सकते हैं।

प्रातराशे त्वजीर्णऽपि सायमाशो न दुष्यति।

अजीर्णे सायमाशेतु प्रातराशो हि दुष्यति।।

अर्थात् सुबह का खाना पूर्णतः पाचन न हुआ हो तब भी सायंकाल में खाने से दोष नहीं होता। परन्तु रात का खाना पूर्णतः पाचन न हुआ हो और सुबह में यदि खाया जाय तो अवश्य ही दोष निर्माण होता है। यह बात स्पष्टतः देखनी हो तो स्वयं अनुभव कर सकते हैं।

असमय खाने के दुष्परिणाम : असमय का अर्थ अयोग्य समय अर्थात् भूख न लगी हो अथवा भूख लगकर नष्ट हो गई हो ऐसे समय खाना। भूख न लगने पर खाने से अजीर्ण के सभी लक्षण तुरन्त दिखाई देते हैं, वैसा ही समय निकल जाने पर खाने से भी होता है। अर्थात् अन्न पाचन ठीक से न होने से अजीर्ण तथा उसके कारण होनेवाले अनेक उपद्रव निर्माण होते हैं। विशेषतः पेट भारी लगना, मितली, आलस्य, तन्द्रा, कभी-कभी उल्टी या दस्त होना इत्यादि रोग होते हैं।

योग्य अन्न के सुपरिणाम :

न च आहार समं किंचिद् भैषज्य मुपलभ्यते।

शक्यते अपि अन्न मात्रेण नरः कर्तुं निरामयः।।

भेषजो न उपपन्नो अपि निराहारो न शक्यते।

तस्माद् भिषग्भिः आहारो महाभैषज्यं उच्यते।। काश्यपसंहिता।

आहार के समान कोई औषध नहीं, केवल आहार के द्वारा ही मनुष्य को निरोगी बनाया जा सकता है। श्रेष्ठ औषधी भी योग्य आहार बिना रोग ठीक नहीं कर सकती। इसीलिये वैद्य कहते हैं कि आहार ही "महा औषधि" है।

प्राणाः प्राणभृतामन्नमन्नं लोकोऽभिधावति।

वर्णः प्रसादः सौस्वर्यं जीवितं प्रतिभा सुखम्।

तुष्टिः पुष्टिः बलं मेधा सर्वं अन्ने प्रतिष्ठितम्।। चरक संहिता।

अर्थात् अन्न ही प्राण है और इसी के आधार से जीवित रहना सम्भव होता है। शरीर का योग्य वर्ण, कान्ति, इन्द्रियों की प्रसन्नता, इत्यादि सभी बातें आहार के ही आधीन हैं।

जब तक जीवित रहना है तब तक "योग्य" अन्न का सेवन करना ही चाहिये। योग्य अन्न शब्द से अन्न पदार्थ को योग्यता का प्रमुख निर्देश समझना चाहिये। योग्य विधि, योग्य काल इत्यादि स्वतन्त्र विषय हैं।

रसायन अभ्यास

रसायन का अर्थ है रसादि (रक्त, मज्जा आदि) धातुओं को प्रशस्त बनाए रखने के उपाय। अभ्यास का अर्थ है पुनः-पुनः सेवन करना। वृद्धावस्था में स्वभाव से ही धातुओं का बल क्षीण होता जाता है। उन्हें पूर्णतः तारुण्यवत् बनाना तो दुष्प्राप्य है परन्तु उनके ह्रास की गति को अवश्य कम किया जा सकता है। इन रसायनों में आहार रसायन, विहार रसायन एवं आचार रसायन ऐसे विभाग होते हैं। यहाँ केवल "आहार रसायन" तक ही विचार करेंगे।

क्षीरघृताभ्यासो रसायनानाम् (श्रेष्ठः)। चरक संहिता।

गाय का दूध और घी ये दो श्रेष्ठ रसायन पदार्थ हैं। इनका नित्य ही सेवन करना चाहिये। इन दोनों ही के सेवन से वात दोष का प्राबल्य कम होता है तथा बड़ी आँत में आनेवाली रूक्षता को कम किया जाता है जिससे अनेक व्याधियों को दूर किया जा सकता है। बुद्धि, स्मृति, धारण शक्ति इत्यादि पर भी इसके उचित लाभदायक परिणाम होते हैं। त्वचा पर झुर्रियाँ नहीं पड़तीं एवं कान्ति-वर्ण अच्छा रहता है।

आजकल जिस प्रकार का दूध और घी उपलब्ध है उससे भी लाभ उठाने हों तो उन्हें "संस्कार" करने के पश्चात् ही प्रयोग करें। धारोष्ण दूध अमृतोपम होता है। अन्यथा ताज़ा दूध गरम करके मलाई हटाकर पीना उत्तम होता है। बासी दूध मन्द आँच पर पकावें। पकाते समय उसमें कुछ सोंठ, वायविडंग मिलाकर मलाई निकालकर पीवें। दूध की मात्रा अपने-अपने अग्नि तथा सात्म्य (आदत) पर निर्भर करती है। वैसे यदि केवल दूध पीने से पेट में गुड़गुड़ाहट, अफारा, जुलाब आदि की शिकायत हो तो दूध को खाने के साथ लेना लाभकर होता है। जिनको दूध की आदत है उन्हें तो दूध स्वतन्त्र रीति से पीना ही अच्छा होता है। वैसे ही "घी" की मात्रा का भी विचार करें। यदि "स्नेहनार्थ" प्रयोग करना हो तो वैद्य की सलाह से करें। "रसायनार्थ" प्रयोग करना हो तो नियमित रूप से तथा नियमित मात्रा में भोजन के साथ ही करें। कुछ लोगों को घी खाने से नफरत होती है क्योंकि उससे जी मिचलाता है, अरुचि होती है। ऐसे व्यक्तियों को भोज्य पदार्थ घी में बनाकर देने चाहियें। इससे आवश्यक लाभ भी होते हैं तथा दुष्परिणाम नहीं होते। दूध, घी का प्रयोग सभी वृद्ध युक्ति से करें।

(क्रमशः)

जोड़ों का दर्द

वातनाशक तेल

वैद्य रमाकान्त मणि, कानपुर

जोड़ों में दर्द (गठिया) अधिकतर दो प्रकार का देखने को मिलता है–

– एक जोड़ में रहने वाला (स्थिर)

– शरीर के सारे जोड़ों में घूमने वाला अर्थात् जो अपना स्थान बदलता रहता है।

उपरोक्त दोनों प्रकार की तकलीफ के लिए हमने एक नुस्खा तैयार किया और उसको अनेक रोगियों पर प्रयोग किया, जिससे उन्हें काफी लाभ देखने को मिला।

सामग्री : – मदार के पत्ते का रस – १ छँटाक

– धतूरे के पत्ते का रस – १ छँटाक

– धतूरे का फल – १ समूचा

– दो गाँठ लहसुन

– सोंठ – ३ छँटाक

– अफ़ीम – १ मटर के बराबर

बनाने की विधि – उपरोक्त औषधियों को लेकर कूटकर अलग किसी साफ बर्तन में रख देते हैं। एक कढ़ाही में शुद्ध सरसों का तेल लेकर गर्म करते हैं। जब वह उबलने की स्थिति में आ जाए तब उसमें बकरी का दूध आधा पाव डाल दें, फिर औषधियों (कूटी हुई) को भी इसी में डालकर तेल को पकाते हैं, जब पकते–पकते दूध व औषधियों का रस जल जाए व सिर्फ तेल बचे, तब कढ़ाही को उतारकर ठंडा होने के लिए रख देते हैं। जब तेल ठंडा हो जाए तब उसे छानकर, साफ शीशी में भरकर रख लेते हैं। जिस स्थान पर दर्द हो वहाँ पर दिन में दो–तीन बार लगाते हैं। इसके साथ लहसुन का चार जवा (या कम से कम दो) बासी मुँह रोज प्रातः लें। इससे रोगी को लाभ मिलता है। यह प्रयोग २१ दिन तक लगातार करें।

अपथ्य : बैंगन, उड़द की दाल, चावल, मसूर की दाल, कद्दू तथा पका केला।

आवश्यकता है

१. संपादकीय सहायक

जीवनीय परिवार में एक संपादकीय सहायक की तत्काल आवश्यकता है। अभ्यर्थी को आयुर्वेद/यूनानी/वनौषधि विज्ञान के ज्ञान के साथ यदि संपादन/भाषा विन्यास का ज्ञान/अनुभव हो तो सोने पर सुहागा जैसा होगा।

जीवनीय की छपाई ऑफसेट द्वारा होती है तथा मूलप्रति लेज़र से तैयार की जाती है। युवाओं को इस पत्रिका में सीखने के अपूर्व अवसर हैं।

२. कार्यालय सहायक

जीवनीय कार्यालय को एक ऐसे व्यक्ति की आवश्यकता है जो कार्यालय की फाइलों, पत्राचार आदि के साथ लेखा (एकाउंट्स) जोखा के काम में भी मदद/देखभाल कर सके। इच्छुक व्यक्ति यदि अवकाश प्राप्त अधिकारी भी हों तो उचित रहेगा।

जैसा कि आप जानते हैं, जीवनीय एक ऐसे आंदोलन का अंग है जिससे स्वास्थ्य की स्थानीय परंपराओं के संवर्धन के देशव्यापी प्रयास किए जा रहे हैं। चूंकि यह पत्रिका एक स्वयंसेवी संस्था का अंग है इस कारण हम संभवतः व्यावसायिक स्तर का वेतन तो न दे सकें पर शैक्षिणिक योग्यताओं और अनुभव के आधार पर उचित पारिश्रमिक देने का हमारा पूरा प्रयास रहता है।

इच्छुक अभ्यर्थी **१० दिन के अंदर** निम्न पते पर संपर्क करें।

जीवनीय, ई–III/२५०, सेक्टर एच, अलीगंज, लखनऊ – २२६ ०२०

पंजीकरण सं. 1071

प्रमाण–पत्र सं.– 20/30/13 खा.ग.बो. दूरभाष

अमोघ ग्रामोद्योग सेवा समिति बीर, हथौधा,

बाराबंकी (उ.प्र. खादी ग्रामोद्योग)

जड़ी–बूटी संकलन द्वारा प्रशोधित वनौषधियाँ

प्रधान कार्यालय मटियारी चौराहा आकाशवाणी के सामने, फ़ैज़ाबाद रोड, चिनहट लखनऊ

१ उदरामृत योग : यह वायुविकार, कब्ज़, पेचिस, क्वालाइटिस, यकृत दोष, रक्त विकार, धातुक्षीणता, ज्वर को समूल नष्ट करके स्वास्थ्य बढ़ाता है।

२. अमोघ आयुर्वेदिक ड्राई शैम्पू : बालों को साफ, मुलायम, हल्का करता है, असमय में सफेद होना, कशेों का झड़ना रोककर, रूसी, खुश्की को दूर करके बालों की जड़ों को पूर्ण अमोघ तत्व प्रदानकर उन्हें लम्बे, काले, चिकने, घने व चमकदार बनाता है।

३. त्रिफला वनौषधि केश तेल : यह सिरदर्द, मस्तिष्क की दुर्बलता व गर्मी, अधकपारी, कशेों का असमय गिरना, पकना, खुश्की को समाप्त करके बालों को लम्बा, घना, चिकना, कालिमा हेतु वरदान है। मधुर सुगन्धयुक्त इस तेल के प्रयोग से केश स्वस्थ होते हैं, नेत्र ज्योति, स्मरणशक्ति में विशेष लाभ होता है।

४. बजरंग पाक : यह वीर्य को स्थिर करके पुरुषत्व को बढ़ाता है, नपुन्सकता, धातुक्षीणता, स्वपनदोष, शीघ्रपतन, जोड़ों के दर्द को समाप्त करके शरीर को नव स्फूर्ति एवं आजस्विकता से परिपूर्ण करता है।

५. अमोघ नारी जीवन : यह श्वेत प्रदर, रक्त प्रदर, अनियमित मासिक धर्म, शारीरिक पीड़ा, हाथ पैरों में जलन, प्रसूत ज्वर, आलस्य को समाप्त करके गर्भावस्था एवं प्रसवोपरान्त विशेष लाभकारी है।

६. दन्तामृत : यह दाँतों से खून आना, दुर्गन्ध, मसूड़ों के कष्ट पायरिया आदि को समाप्त करके दाँतों को मोती सा चमकदार एवं मजबूत बनाता है।

७. सावित्री आयुर्वेदिक चाय : इसके प्रयोग से कफ, खाँसी, जुकाम, नजला, बुखार, मलेरिया, गले की खराश आदि तकलीफें दूर होती हैं, नेत्र–ज्योति में स्वमेव वृद्धि, चाय पीने की आदत का परित्याग करने में कष्ट नहीं होता है एवं ज्वर भी समाप्त हो जाता है। (१०० ग्राम मूल्य १०.०० रु. २५० ग्राम मूल्य २२.००)

८. त्रिफला चूर्ण : यह आयुर्वेद सम्राट उदर विकार, रक्त विकार, चर्म विकार को दूर करता है। नेत्र विकार पर इसका अद्भुत प्रयोग है।

९. लवण भास्कर चूर्ण : अपच, अरुचि, मन्दाग्नि, खट्टी–मीठी डकारें आना, पेट दर्द को समाप्त करता है।

१०. शंखपुष्पी शरबत एवं शंखपुष्पी चूर्ण : यह मधुर एवं शीतल पेय मानसिक विकारों एवं स्मरणशक्ति के लिये विशेष लाभदायक है।

११. स्पेशल च्यवनप्राश : आयुर्वेदिक टॉनिक अमृत सागर के आधार पर निर्मित यह कफ, खाँसी, श्वास, दमा को नष्ट करके बल–बुद्धि वर्द्धक, कांति, पुष्टता और वृद्ध को तरुण करता है।

लिव–इन्स वाल पेपर

वाल कवरिंगस दिवाल कागज़

खूबसूरत किफायती टिकाऊ

लगाने में आसान

न धूल न रंग के छींटे

न साफ सफाई की खटपट

काम हो इतने सस्ते में

और उतनी ही झटपट!

श्री विन्ध्या पेपर मिल्स लिमिटेड,

इण्डियन मर्केण्टाइल चेम्बर्स, तीसरा महला,

१४ आर. कमानी मार्ग,

बम्बई – ४०० ०३८.

वार्धक्य

एक स्वाभाविक रोग

वैद्य र.म. नानल, मुंबई

आयुर्वेदीय संहिताओं में विविध प्रकारों से रोगों का वर्गीकरण किया है। सुश्रुत संहिता में भी सप्त विध वर्ग लिखे हैं। उनमें से एक प्रकार "स्वभाव बल प्रवृत्त" रोगों का है। कहा है–

"स्वभाव बल प्रवृत्ताः क्षुत् पिपासा जरा मृत्यु निद्रा प्रभृतयः।

तेऽपि द्विविधाः कालकृता, अकालकृताश्च;

तत्रपरिरक्षणकृताः कालकृताः अपरिरक्षणकृता अकालकृताः।"

अर्थात् क्षुधा, तृष्णा, वृद्धत्व, मृत्यु और निद्रा इत्यादि रोग स्वभाव–बल–प्रवृत्त अर्थात् स्वभाव के कारण होने वाले रोग हैं। वे दो प्रकार के हैं कालकृत और अकालकृत। इनमें से शरीर की योग्य रीति से रक्षा करने पर भी यथायोग्य समय पर निर्माण होने वाला रोग "कालकृत" है। योग्य रक्षा न करने पर जो निर्माण होता है वह "अकालकृत" है, जैसेअकालमृत्यु।

क्षुधा, पिपासा आदि सभी वास्तव में शरीर के जीवन धर्म हैं। इसीलिये उनको "स्वभाव" कहा गया है। फिर भी इन्हें रोग की संज्ञा क्यों दी गई? क्योंकि, इन सबमें उपचारों की अपेक्षा की जाती है। "विकार" का अर्थ है बुद्धि, मन, इन्द्रिय, शरीर में "अन्यथाभाव" निर्माण होना। उपरोक्त सभी में ये "अन्यथाभाव" निर्माण होते हैं, जैसे मन, इन्द्रियादि का क्लम (थकावट) तथा शरीर में कफ एवं तमोगुण के बढ़ने से "निद्रा" नाम यह स्वाभाविक रोग होता है जो "सो जाने" के उपचार से ठीक होता है अन्यथा अनेक रोगों का कारण भी बन सकता है।

वार्धक्य रोग क्यों है?

पदार्थ मात्र की षड्विध अवस्थाएँ होती हैं। उत्पत्ति, अस्तित्व, वृद्धि, परिणति, क्षय, नाश (मृत्यु)।

वृद्धावस्था की व्याख्या देखने पर यह पता चलता है कि इस अवस्था का प्रारम्भ "क्षय" नामक पाँचवीं अवस्था के साथ होता है।

धातु और इन्द्रियादि की शक्ति क्रमशः कम होती जाती है। स्मृति–बुद्धि में भी भ्रंश (अर्थात् कार्य हानि) होने लगता है; वायु का प्राबल्य हो जाता है (अर्थात् दोषों की समावस्था नहीं रहती) इसीलिये ऐसे शरीर को "जीर्ण" कहते हैं।

इसी जीर्णावस्था का वर्णन अत्यन्त भेदक रूप में श्रीमद् शंकराचार्य करते हैं;

अंगं गलितं पलितं मुण्डं दशनविहीनं जातं तुण्डम्।

वृद्धो याति गृहीत्वा दंडं तदपि न मुन्चत्याशापिण्डम्।।

इन सभी लक्षणों को देखकर कोई भी अवश्य मान लेगा कि "वार्धक्य स्वाभाविक रोग है।" भले ही वह कालकृत हो या अकालकृत, पर है"रोग"ही।

किसी शायर ने खूब कही है;

ऐ बुढ़ापा तुझसे मेरी दोस्ती नहीं लड़ाई है।

तेरा आना दोस्ताना नहीं दुश्मन की चढ़ाई है।।

बुढ़ापा

कारण, समस्याएँ और समाधान

वैद्य एस.ए. खान, लखनऊ

बुढ़ापा दो प्रकार का होता है। एक स्वाभाविक या प्राकृत या कालज जो बढ़ती आयु के कारण आता है। दूसरा कृत्रिम, असमय, कर्मज या इन्द्रियों के अतियोग, मिथ्या योग, अयोग या मिथ्या आहार-विहार और प्रज्ञापराध के कारण होता है। यह कृत्रिम बुढ़ापा समय से पहले ही आ जाता है। ऐसे बुढ़ापे के आने के समय को हम अपनी इन्द्रियों के सम्यक योग, हिताहार-विहार रसायन और आचार रसायन का सेवन करके बढ़ा सकते हैं।

बुढ़ापा आता क्यों है? यह प्रश्न मानव सदैव उठाता रहा है। इसका सम्भवतः उत्तर यही हो सकता है कि जिस प्रकार सृष्टि, स्थिति और प्रलय द्वारा प्रकृति का चक्र पूर्ण होता है उसी प्रकार जन्म, बाल्यावस्था, किशोरावस्था, युवावस्था, प्रौढ़ावस्था, और मृत्यु द्वारा मानव जीवन का कालचक्र पूर्ण होता है। वृद्धावस्था भी इसी चक्र का एक घटक है अतः इसे हमेशा के लिये नहीं रोका जा सकता। इसके आने के समय में विलम्ब अवश्य किया जा सकता है। यह विलम्ब वर्षों से लेकर सदियों तक का हो सकता है। यह विलम्ब हमारी उन प्रक्रियाओं पर निर्भर होगा जिनका उपयोग हम बुढ़ापे को आने से रोकने के लिये करेंगे।

प्राचीन मनीषियों ने भी बुढ़ापे को आने से रोकने के लिये अनेक प्रयत्न किये थे। मृत्यु को जीतने और अमरत्व प्राप्त करने के अनेक प्रयत्न किये गये। कुछ ऋषियों ने तो कहते हैं हजारों वर्ष की आयु प्राप्त की थी। आयुर्वेद चिकित्सा शास्त्रों में अनेक रसायनों का वर्णन है जिनसे शरीर का कायाकल्प हो जाता है, शरीर की धातुओं में नव-निर्माण आरम्भ हो जाता हे, इन्द्रियाँ नवीन हो जाती हैं। इन चमत्कारिक रसायनों का सेवन करके स्वाभाविक और प्राकृत बुढ़ापे को भी काफी लम्बे समय तक टाल कर आयु बढ़ाई जा सकती है।

आयुर्वेद के मत से पूरे जीवन में लगभग १०० अवसर मृत्यु के आते हैं जिनमें से ९९ अकाल मृत्यु के अवसर औषधि, मन्त्र, दान, प्रार्थना, जप, रत्न धारण, तपस्या (इबादत) आदि द्वारा टाले जा सकते हैं परन्तु काल मृत्यु आ असली मृत्यु का समय आने पर उसे टाला नहीं जा सकता। इसी प्रकार अधिकांश लोग असमय बुढ़ापे से पीड़ित होते हैं जिसे विभिन्न उपायों से कुछ समय तक रोका जा सकता है। अधिकांश लोगों की मृत्यु भी अकाल मृत्यु होती है। बाल्यावस्था (लगभग १२ वर्ष तक) कफ प्रधान, किशोरावस्था (१२ से १८-२० वर्ष तक) उत्तरोत्तर बढ़ते पित्त और घटते कफज, युवावस्था (२० से ४० वर्ष तक) पित्त प्रधान, प्रौढ़ावस्था (४० से ६० वर्ष तक) उत्तरोत्तर बढ़ते वात और घटते पित्त, वृद्धावस्था (६० वर्ष से अधिक) बढ़ते वात और कफ तथा कुपित होते वात प्रधान तथा हीन पित्तज होती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि बुढ़ापे में वात दोष सबसे प्रबल होता है जो स्वभाव से बढ़ा रहता है और शीघ्र कुपित होकर वातज रोग पैदा कर देता है। वात के बाद दूसरे नम्बर पर कफ आ जाता है क्योंकि पित्त के क्षीण होने पर शरीर में पित्तज अग्नि व्यापार (पाचकाग्नि और घाटवाग्नि कर्म) क्षीण हो जाता है। शरीर में उष्मा और ताप की कमी आ जाती है फलस्वरूप कफ बढ़ने लगता है और वातकफ का अधिपत्य हो जाता है। रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा, शुक्र आदि धातुओं का निर्माण कार्य धीमा पड़ जाता है। शरीर में धातुओं की क्षतिपूर्ति नहीं हो पाती है, यदि कुछ विशेष प्रयत्न न किये जायें तो वात कफज रोग होने लग जाते हैं।

यहाँ पर यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि वात प्रकृति के लोगों को वृद्धावस्था में वातज व्याधियाँ अधिक एवं कष्टदायी होती हैं। वात कफज प्रकृति के लोगों को वात कफ रोग अधिक और कष्टप्रद होते हैं। पित्त प्रकृति के लोगों को बुढ़ापे में बहुत आसानी रहती है। कफज प्रकृति के लोग भी यदि कफज आहार-विहार न त्यागें तो उन्हें भी कष्टप्रद रोग हो सकते हैं।

असमय बुढ़ापा आने के कारण

- षटरस आहार या पांचभौतिक (सन्तुलित) आहार का न लेना अर्थात् कुपोषण होना।
- **इन्द्रियों का दुरुपयोग :** जैसे कान से लगातार ऊँची, तेज़, अप्रिय आवाज़

सुनना, शोर के मध्य रहना, नेत्रों से तेज़ रोशनी, अधिक धूप, चमक, सूर्य ग्रहण देखना, टी.वी. देखना, कम प्रकाश में लगातार पढ़ना, उल्टे-सीधे लेटकर लगातार पढ़ना आदि क्रमशः बहरापन, कम सुनना या अन्धापन या कम दिखाई देना आदि रोग हो जाते हैं इसी प्रकार अन्य इन्द्रियों के विषय में समझना चाहिये।

• युवावस्था या प्रौढ़ावस्था से ही लगातार शारीरिक-शक्ति से अधिक लगातार शारीरिक श्रम करना। इसकी क्षतिपूर्ति हेतु पौष्टिक आहार न लेना।

• रूक्ष अन्न, क्षार द्रव्य, पानी का अधिक सेवन, दरिद्रता का जीवन, विरुद्ध अन्न-पान आदि का लगातार सेवन करना।

• **स्वाभाविक वेग** : मल, मूत्र, भूख, प्यास आदि को लगातार धारण करना अर्थात् रोकना।

• लगातार रात्रि-जागरण, अति भाषण, अति मैथुन, अधिकतर भूखे रहना, अभाव में जीवन बिताना।

• खान-पान, रहन-सहन में किन्हीं नियमों का पालन न करना। अनियन्त्रित, अनियमित जीवन जीना।

• अत्यधिक भोजन करना, मद्य व अन्य नशीले पदार्थों का सेवन करना, अपवित्र, भय युक्त, अपराध युक्त, पाप युक्त, आत्मा के विरुद्ध लगातार जीवन जीना।

• लगातार चिन्ता, शोर, दुःखी जीवन जीना।

• संग्रहणी, शोथ आदि रोग से अधिक समय तक पीड़ित रहने से या विभिन्न रोगों से लगातार ग्रसित रहने से।

• लगातार कलहपूर्ण, परेशानियों से पूर्ण मानसिक असन्तोषपूर्ण जीवन का शरीर पर कुप्रभाव पड़ता है और बुढ़ापा **शीघ्र** जल्दी आता है।

वृद्धावस्था की समस्यायें

• **इन्द्रियों के शैथिल्य से** : बहरापन, कम सुनाई पड़ना, अन्धापन, मोतियाबिन्द, नज़र का कमजोर होना।

• हृदय रोग : अधिकतर वातज हृदय रोग जिसे एन्जाइना कहते हैं। या वातकफज – धमनी काठिन्य हो जाता है इसका भी सम्बन्ध हृदय रोग से होता है।

• रक्तचाप का बढ़ना : वृद्धावस्था में यह अधिकतर वातज या वात कफज होता है। धमनी काठिन्य वात कफज होता है और रक्तचाप को बढ़ा देता है।

• लकवा, ग्रद्धसी, सन्धिवात, कम्पवात आदि वातज रोग।

• पौरुष ग्रन्थि शोथ, गुर्दे, मूत्राशय आदि में पथरी।

• मधुमेह या बहुमूत्र।

• खाँसी या ज़ुकाम बार-बार होना, बलग़म अधिक आना।

• चिड़चिड़ापन, स्मरण-शक्ति कम हो जाना या कभी-कभी पागलपन।

• अनिद्रा और अकेलापन।

• स्त्रियों में गर्भाशय आदि के रोग।

• किन्हीं वृद्धों में संग्रहणी या अतिसार या अर्श या कुछ अंगों के कैन्सर आदि।

वृद्धावस्था समस्याओं का निराकरण

• प्रौढ़ावस्था में प्रवेश करते ही अपनी प्रकृति और शरीर में दोषों की स्थिति के अनुसार किसी उपयुक्त रसायन (बाजारू रसायन नहीं) का प्रयोग आरम्भ कर दें तथा लगातार प्रयोग करते रहें।

• आयुर्वेद चिकित्सीय नियमों के अनुसार सदैव अच्छा पौष्टिक सुपाच्य आधा पेट भोजन खायें चौथाई पेट पानी पियें और चौथाई भाग उभार आदि के लिये खाली रखें। भरपेट खाने वाले और पेटू लोग कम आयुज होते हैं।

• वृद्धावस्था वात कफ प्रधान होती है। पित्त क्षीण होता है। अतः आलसी और आराम तलब जीवन न बितायें। शारीरिक श्रम बिल्कुल त्याग न दें। हल्का-फुल्का श्रम वाला कोई कार्य जैसे बागवानी या अन्य कोई कार्य जिसमें हल्का शारीरिक श्रम और कुछ क्रियात्मकता भी हो नियमित करें। ऐसा कार्य जिसमें शारीरिक श्रम के साथ कृत उत्पाद का आनन्द भी प्राप्त हो बहुत उपयुक्त रहता है। टहलना भी हल्का उपयोगी श्रम है। शारीरिक व्यायाम भले ही हल्का हो। उपरोक्त से अच्छा नहीं है। हल्के श्रम से शरीर में स्फूर्ति आती है। शरीर में पित्त की क्रिया में सुधार होता है। जैसे – कठिन परिश्रम, शारीरिक श्रम, मानसिक श्रम।

• **वात कफ वर्धक आहार-विहार** : जैसे – चावल, पालक, चौलाई, घुइयाँ, आलू, सिंघाड़ा, ककड़ी तथा खीरे का सेवन न करें। ओस, कोहरा, ठन्डी हवा से बचें, सिर व शरीर को विरुद्ध समय ढक कर रखें।

• **वात वर्धक वस्तुएँ** : चावल, दालें (दो दाल वाले सभी पदार्थ) मूँग, उड़द को छोड़कर परन्तु उड़द गरिष्ठ होता है। पच सके तभी खायें। लाल मिर्च, पत्ते वाली सब्ज़ियाँ (साग) जैसे – सोया मेथी, पालक, चौलाई, मूली, सरसों आदि का साग न खायें या कम से कम खायें। वात प्रकृति वाले वृद्ध तो कतई न खायें। पित्तज प्रकृति वाले थोड़ी मात्रा में इनका उपयोग कर सकते हैं।

शेष पृष्ठ ३५ पर

बुढ़ापा और दिमाग़ी कमज़ोरी

डॉ. अयोध्या प्रसाद अचल, गया

आम धारणा है कि जैसे-जैसे बुढ़ापा आदमी की ज़िन्दगी में आगे कदम बढ़ाता जाता है उसकी शारीरिक शक्तियों के साथ-साथ मानसिक शक्तियाँ भी जवाब देने लगती हैं। इसकी सबसे पहली अभिव्यक्ति भूलने की आदत और नई चीजों को सीखने में कठिनाई के रूप में होती है। छोटी-छोटी समस्याओं के समाधान में भी वे कठिनाई का अनुभव करने लगते हैं। इसीलिये वे दिमागी खेलों या ऐसी समस्याओं के समाधान में जिनमें जल्द से जल्द समाधान प्रस्तुत करने की अपेक्षा होती है भाग लेने से कतराने लगते हैं। वे नहीं चाहते कि दूसरे लोग उनकी इस कमज़ोरी को जानें या उन्हें अपने से कम उम्र वालों के सामने नीचा देखना पड़े।

आदमी के शरीर और मन, दिलोदिमाग में घटाव की जो प्रक्रिया प्रौढ़ावस्था के उत्तरार्ध में शुरू होती है वह फिर ज़िन्दगी के अन्तिम क्षण तक बनी रहती है। लेकिन आमतौर पर इसकी गति बड़ी ही धीमी होती है। साथ ही इसमें अनेक व्यक्तिगत भिन्नताएँ पाई जाती हैं। इस दिमागी घटाव के शुरू होने की न तो कोई खास उम्र होती है और न कोई खास पैटर्न। आमतौर पर देखा जाता है कि उच्च मानसिक स्तरवाले प्रतिभावान और बौद्धिक कार्यों में लगे हुए लोगों में निम्न मानसिक स्तरवालों की अपेक्षा मानसिक ह्रास की गति बहुत ही मन्द होती है। सातवलेकर जी १०४ साल की उम्र तक नियमित वेदों पर भाष्य लिखते रहे। चर्चिल से आखिरी वक्त तक लोग राजनीति की दीक्षा लेने जाते रहे।

मानसिक ह्रास की रफ्तार बहुत कुछ भौतिक परिस्थितियों पर निर्भर रहती है। उत्साहवर्द्धक एवं अनुकूल परिस्थितियों में आदमी अधिक से अधिक समय तक

मानसिक रूप से सक्रिय रह सकता है। आमतौर पर बुढ़ापे में मानसिक ह्रास उतना होता नहीं है जितना कि मान लिया या कहा जाता है।

मानसिक ह्रास के कारण

कुछ समय पहले तक बुढ़ापे में मस्तिष्क की धमनियों के कठोर हो जाने से या मस्तिष्क की कोशिकाओं के क्षय हो जाने से उत्पन्न रोगों को मानसिक ह्रास का कारण माना जाता था। शारीरिक ह्रास के समान ही मानसिक ह्रास को अवश्यम्भावी माना जाता था। पर हर हालत में ऐसा होता ही हो यह जरूरी नहीं है।

दैहिक बल एवं शक्ति की कमी, आँख, कान आदि इन्द्रियों द्वारा अपने विषयों को ग्रहण करने में होनेवाली कठिनाई, मस्तिष्क में आने वाले बदलाव और बुढ़ापे में खास तौर पर होने वाली अन्य बीमारियाँ जैसे – गठिया, मधुमेह, हाज़मे की कमज़ोरी आदि न केवल आदमी के शरीर पर असर डालती हैं बल्कि उसकी संवेगात्मकता, जीवन के प्रति नजरिये और इच्छाशक्ति को भी प्रभावित करती हैं।

बुढ़ापे में घटनेवाली दिमागी कमज़ोरी का शायद सबसे बड़ा कारण आदमी का खुद अपनी अवस्था के प्रति बदला हुआ दृष्टिकोण होता है। परम्परागत सामाजिक मान्यताओं, विश्वासों – यथा 'सठियाना', 'कहीं बूढ़े तोते भी राम-राम पढ़ते हैं?', 'अब तो राम नाम जपने की उम्र है' आदि को जैसा का तैसा मानकर जो अपने को जितनी जल्दी बूढ़ा मान लेता है वह उतनी जल्दी बूढ़ा होने लगता है। इन मान्यताओं को मानकर वे खुद अपनी शक्तियों और योग्यताओं में अविश्वास करने लगते हैं, उन्हें कम आँकने लगते हैं। नये कामों को करने तथा नई चीजों को सीखने में 'लोग क्या सोचेंगे' जैसी आलोचना के भय से आशंकित होने लगते हैं। फलस्वरूप उनकी प्रेरणाशक्ति में कमी

वृद्धावस्था में मन छोटा न करें

डॉ. जयंती भट्टाचार्य, पटना

वृद्धावस्था यानी बुढ़ापा जीवन की अनिवार्य परिणति है। हर इन्सान चाहे वह किसी भी वर्ग या मज़हब का हो बूढ़ा तो होगा ही। लोग अक्सर बुढ़ापे से घबड़ाते हैं और मानसिक तथा शारीरिक दोनों प्रकार का स्वास्थ्य खो बैठते हैं।

वृद्धावस्था यानी अवकाश की जिन्दगी। फुर्सत ही फुर्सत। ऐसी जिन्दगी में अवसाद, सन्तुलन खो बैठना आदि प्रायः हो जाता है। वृद्ध–वृद्धा खुद को गुनहगार समझने लगते हैं। इसलिए वृद्ध व्यक्तियों पर अधिक से अधिक ध्यान देना आवश्यक होता है। थोड़ी सी सहानुभूति, इज्ज़त और प्यार एक वृद्ध के लिए लाख दवाओं का काम करती है। वृद्धों की एक मनोवृत्ति यह भी प्रायः होती है कि मेरी सब अवहेलना करते हैं। इसलिए खासकर यह जरूरी हो जाता है कि वृद्धों पर विशेष ध्यान दें। अक्सर यह देखा जाता है कि परिवार के युवा सदस्य अपने वृद्ध या वृद्धा रिश्तेदारों के प्रति बेरुखी व कड़ेपन से पेश आते हैं। उनके कुछ पूछने पर झुंझलाते हैं और जवाब दिये बिना चलते बनते हैं। इसका असर उस वृद्ध या वृद्धा के मानसिक स्वास्थ्य पर सीधे पड़ता है और वे भावुक हो जाते हैं और मन से यह चाहने लगते हैं कि मैं जल्दी मर जाऊँ। लोग मुझे चाहते नहीं हैं सब नफरत करते हैं। इस तरह की मामूली बाते खतरनाक साबित होती है।

बुढ़ापे की दहलीज़ पर पहुँचकर बूढ़े इन्सान को यह कभी महसूस नहीं करना चाहिए कि हम बूढ़े हो गए हैं और काम के नहीं रहे। हम परिवार व दुनिया से कट गए हैं। यह महसूस करना खतरा मोल लेना ही है। बुढ़ापा यानी अनुभव, जो कुछ सिखा सकता है। इसलिए बुढ़ापे को हेय दृष्टि से नहीं देखना चाहिए। कभी यह नहीं महसूस करना चाहिए कि हम बूढ़े हो गए, लाचार हो गए, और अब हम तुच्छ हैं। इससे मनोबल टूटता है और मनोबल टूटना खतरनाक है, वृद्धों के लिए तो और भी। इसलिए मन का स्वस्थ होना सबसे जरूरी है। मन को हमेशा ऊर्जा मिलनी चाहिए और बूढ़े होने पर भी मन को खुश रखना चाहिए।

आने लगती है। वे लोगों से कतराने लगते हैं। जवाब में दूसरे लोग भी उनकी अनदेखी करने लगते हैं। इससे उनका हीनता भाव और मज़बूत होता है और वे खुद अपने आप को समाज के लिये अनुपयोगी जैसा समझने लगते हैं। दूसरों के साथ तादात्म्य करने की उनकी क्षमता घटने लगती है। अंग्रेज़ी की एक कहावत है – "ऐज़ यू थिंक सो यू बीं" अर्थात् तुम अपने को जैसा सोचते हो वैसे ही बन जाते हो। नये कामों को न करने, नई चीजों को न सीखने तथा नये माहौल के हिसाब से अपने को न बदलने, न ढालने से उनकी याददाश्त भी धीरे–धीरे जवाब देने लगती है। मानसिक ह्रास की गति बढ़ने लगती है। यह तो प्रकृति का नियम है कि जिस अंग से आप काम लेना बन्द देंगे वह खुद–ब–खुद बेकार होने लग जाएगा।

मनोह्रास का उपचार

आज दिन–प्रति–दिन चिकित्साशास्त्र में तरक्की के साथ–साथ मनुष्य का औसत स्वास्थ्य और औसत उम्र भी बढ़ती जा रही है। स्वास्थ्य में उन्नति के साथ–साथ बुढ़ापे के आगमन की आयु भी पीछे भाग रही है। आयुर्वेद तो पहले ही आदमी की औसत आयु १०० वर्ष और बुढ़ापे के आगमन की आयु ७० वर्ष के बाद मानता आ रहा है। इससे पहले अपने को बूढ़ा समझना, बूढ़ा कहना बुढ़ापे को न्यौतना है। जो मन से बूढ़ा हो गया, वह सचमुच बूढ़ा हो जाता है। आपने २० साल के भी बूढ़े और ७० साल के भी जवान देखे होंगे।

बुढ़ापे की रफ्तार को धीमी से धीमी बनाना आपके हाथ की बात है। आप निम्न बातों की ओर ध्यान देकर देखिये :

- आचार–विचार पवित्र बनाइये।
- आप जीने के लिए खाइये। खा–खाकर जीवन को मत बर्बाद कीजिये। अपनी उम्र, स्वास्थ्य और ज़रूरत के लिहाज़ से ही अपने भोजन की व्यवस्था कीजिये।
- किसी भी रोग, विशेष रूप से बुढ़ापे में होने वाले शारीरिक रोगों के उत्पन्न होते ही साध्यावस्था में ही उनका उपचार कराइये। टालकर उन्हें असाध्य न बनाइये।
- नियमित रूप से ४–५ किलोमीटर टहलिये। अपनी उम्र और शारीरिक आवश्यकता के अनुरूप किसी विशेषज्ञ से राय लेकर योगासन कीजिये।
- हमउम्र नए साथी तलाशिये। लोककल्याणकारी रचनात्मक कामों में मन लगाइये। समाज को अपने अनुभव का लाभ दीजिये।

शेष पृष्ठ ३६ पर

ग्रह और हमारा स्वास्थ्य

पं. काशीनाथ गोपाल गोरे, लखनऊ

स्वास्थ्य एवं शरीर संरचना की जानकारी जन्मकुण्डली से प्राप्त करने के लिए सर्वप्रथम तीन बातों पर ध्यान देना आवश्यक है, क्योंकि इन्हीं तीन बातों पर इस विषय की जानकारी निर्भर है।

तीन मुख्य बातें हैं लग्न, सूर्य और चन्द्रमा की स्थिति। इनमें से **लग्न** का प्रभाव शारीरिक बल और शरीर संरचना पर अधिक होता है तथा जिस राशि का लग्न हो उस राशि से सम्बन्धित काल पुरुष के अंगों के अनुसार सम्बन्धित व्यक्ति के अंगों पर बाह्य कारणों से होने वाला प्रभाव भी लग्न के क्षेत्र में आता है।

सूर्य, जीवन शक्ति एवं हृदय पर प्रभाव डालता है। सूर्य का प्रभाव इस सम्बन्ध में स्त्री और पुरुष दोनों पर समान रूप से पड़ता है। इस सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय है कि यदि सूर्य लग्न के समय क्षितिज से ऊपर हो तो जीवन-शक्ति और हृदय बलवान रहेंगे और यदि क्षितिज से नीचे हो तो इनमें क्षीणता परिलक्षित होगी।

पुरुष के सम्बन्ध में सूर्य जीवनदाता का रूप ग्रहण करता है। जन्मकुण्डली में इसकी स्थिति तथा अन्य ग्रहों से उसके सम्बन्ध पर जीवन की अवधि निर्भर करती है।

स्त्री के सम्बन्ध में **चन्द्रमा** मूलतः जीवनदाता है और चन्द्रमा की स्थिति एवं अन्य ग्रहों के सम्बन्ध पर जीवन की अवधि निर्धारित होती है। लग्न, सूर्य और चन्द्रमा आदि के सम्बन्ध में स्थिति के विवरण निम्नवत् हैं –

लग्न

यदि लग्न विषम राशि में हो तो सामान्यतया शरीर बलवान होता है और आगन्तुक कारणों से रोग उत्पन्न होने की सम्भावना कम होती है। सम राशियों में लग्न हो तो सामान्यतया शरीर निर्बल होता है और रोगों की उत्पत्ति की सम्भावना अधिक होती है।

मेष, सिंह, और धनु राशि के लग्न के जातक बलवान होते हैं क्योंकि अग्नि ऊर्जा का रूप है और ये राशियाँ अग्न्यात्मक हैं। इसी श्रेणी में वायवीय राशियाँ अर्थात् मिथुन, तुला और कुम्भ भी हैं जिनमें लग्न होने पर शरीर बलवान रहता है।

पार्थिव राशियों में अर्थात् वृषभ, कन्या और मकर राशियों में लग्न होने पर सम्बन्धित व्यक्ति का शारीरिक बल यद्यपि कम होता है तथापि शरीर भरा-पूरा रहता है और उसकी रचना सही रहती है। जलीय राशियों अर्थात् कर्क, वृश्चिक और मीन में लग्न होने पर सम्बन्धित व्यक्ति सामान्यतया निर्बल होता है और उसकी रोग-प्रतिरोधक क्षमता अल्प होती है।

उपर्युक्त बातों को निश्चित रूप से जानने के लिए लग्न के अंश (डिग्री) जानना भी आवश्यक है जिससे प्रथम भाव और लग्न की राशि पर लग्न का कितना प्रभाव है यह भी स्पष्ट हो सके।

यदि लग्न में –

- सूर्य स्थित हो तो शारीरिक रोग एवं जुकाम से सम्बन्धित बाधाएँ उतपन्न होती हैं।
- चन्द्र स्थित हो तो शरीर के विभिन्न संस्थानों में गड़बड़ियाँ उत्पन्न होती हैं।
- मंगल स्थित हो तो जलन, दुर्घटनाजन्य कष्ट होता है।
- बुध स्थित हो तो नाड़ी संस्थान में कष्ट या मानसिक असन्तुलन उत्पन्न होता है।
- गुरु स्थित हो तो रक्त सम्बन्धी अथवा अति सेवन या अति कार्य आदि से दोष उत्पन्न होते हैं।
- शुक्र स्थित हो तो विषय भोग की अतिशयता से कष्ट होता है।
- शनि स्थित हो तो निर्बलता अथवा सर्दी, जुकाम आदि कष्ट-साध्य एवं लम्बे समय तक चलनेवाले रोग होते हैं।

सूर्य

जैसा कि ऊपर बताया गया है, सूर्य पुरुष के लिए जीवनदाता है और उसके प्रभाव से जीवन की अवधि निश्चित होती है। क्षितिज के ऊपर सूर्य की स्थिति उत्तम मानी जाती है और उस अवस्था में अन्य ग्रह निष्प्रभावी हो जाते हैं।

विषम राशियों में सूर्य अधिक बलवान होता है, जबकि सम राशियों में उसका बल क्षीण माना जाता है। विषम राशियों में वृषभ और वृश्चिक बलवान और सम राशियों में तुला और कुम्भ निर्बल हैं।

अग्न्यात्मक राशियाँ समान गुण धर्म की होने के कारण सूर्य इनमें बलवान् होता है। वायवीय, पार्थिव और जलीय राशियों में क्रमशः सूर्य का बल क्षीण होता जाता है।

शेष पृष्ठ २९ पर

स्वाद, स्वास्थ्य और पर्यावरण

डॉ. विनोद प्रकाश उपाध्याय, हरिद्वार

मनुष्य जन्तु तथा वनौषधियों का जन्म प्रकृति की अनुपम देन है। सबका एक ही स्रोत है, प्रकृति। अतः इनके मध्य सामन्जस्य होना स्वाभाविक ही है। पिछले दिनों में हम प्रकृति से काफी दूर हो गये हैं। जीवन में कृत्रिम और रासायनिक वस्तुओं का प्रवेश बढ़ता जा रहा है। हम स्वयं अपने लिए कठिनाइयाँ पैदा करते जा रहे हैं। अब समय आ गया है कि हम अपनी गलती को सुधारें तथा माँ प्रकृति की शरण में आ जायें प्रकृति से प्राप्त इस अनुपम खजाने को तीन भागों में विभाजित कर सकते हैं–

(१) वानस्पतियों (२) जान्तव और
(३) खनिज।

वनस्पतियों को वैदिक काल से नागार्जुन काल तक पूर्ण महत्व प्राप्त रहा। यदि खनिज द्रव्यों के प्रयोग हुए तो उन्हें भी शोधन तथा मारण (भस्मीकरण) द्वारा वनस्पतियों या जान्तव द्रव्यों की सहायता से ही अन्ततः प्रयोग के लिए उपयोगी बनाया गया। इस प्रकार त्रिफला क्वाथ से निर्मित लौह भस्म न उदरशूल करती है न कोष्ठबद्धता उत्पन्न करती है।

हम अपने आहार–विहार में थोड़ा सा परिवर्तन करके स्वस्थ रह सकते हैं यदि हम निम्न १५ द्रव्यों का प्रयोग भली प्रकार समझ लें। १५ वनस्पतियाँ अपनी गृह–वाटिका में अन्य पौधों के साथ लगा लें तथा १५ पेड़ पर्यावरण में उगा लें तथा १५ द्रव्यों का एक संकलन रख लें। तो हम एक

चित्र डॉ. एच.पी. शर्मा

ऐसा स्वास्थ्य रक्षक किट घर–घर पहुंचाने में सफल हो सकते हैं। उदाहरणार्थ–

रसोई में : (१) अजवायन (२) बड़ी इलायची (३) काली मिर्च (४) जीरा (५) तेजपत्र (६) मेथी (७) धनिया (८) पिप्पली (९) दालचीनी (१०) लौंग

(११) सोंठ (१२) सौंफ (१३) सेंधा नमक (१४) हल्दी (१५) हींग।

इनके बहुत से उपयोग हम घर-घर में होते देखते हैं। खाने के बाद सौंफ खाने की आदत कितनी प्राचीन है। यदि ठंड लग जाए तो सोंठ, कालीमिर्च व पिप्पली का चूर्ण बनाकर गर्म जल से ४-४ ग्राम दिन में २-३ बार प्रयोग कराएँ। इसे त्रिकटु चूर्ण कहते हैं। पेटदर्द होने पर अजवायन, सेंधा नमक, घी में भुनी हींग समान भाग पीसकर चूर्ण बनाकर रख लें। गर्म पानी से ४-४ ग्राम खाएँ। इससे पाचन ठीक होगा, भूख बढ़ेगी। गले में खराश, सूजन हो तो एक गर्म दूध में ४ ग्राम हल्दी डालकर पिएँ। तीन दिन लेने से लाभ होगा। शीतल पेय, बर्फआदि से बचाव करें। मधुमेह के रोगी प्रारम्भिक अवस्था में यदि थोड़ा व्यायाम करने लगें, भोजन में सुधार कर लें तथा ५-५ ग्राम मेथी दिन में दो बार जल से लें तो निश्चित रूप से लाभ होगा। धनिये का पानक इलायची लौंग के साथ बनाकर चीनी से ग्रीष्म ऋतु में लू नहीं लगती-

गृह-वाटिका के लिए १५ पौधे

(१) तुलसी (२) घृत कुमारी, घी क्वार (३) पुदीना (४) गुलाब (५) पत्थर चटा (६) गिलोय (७) उपोदिका (पोई) (८) ब्राह्मी (९) बाँसा (१०) गेंदा (११) अश्वगन्धा (१२) शतावरी (१३) वचा (१४) अकरकरा (१५) अर्कपत्री पर्याप्त हैं।

इन प्रस्तावित पौधों के असंख्य उपयोग हो सकते हैं-

(१) तुलसी - तुलसी के १० पत्ते नित्य निगलने से पाचन संस्थान के रोग, नज़ला, ज़ुकाम, सर्दी, मलेरिया से बचाव होता है। सर्दी-ज़ुकाम की अवस्था में एक कप उबलते पानी में ५ पत्ते तुलसी के डालकर ढक दें, ठंडा करके इसमें आधे नींबू का रस तथा १ चम्मच शहद डालकर पीयें।

(२) घृत कुमारी - आज घृत कुमारी का सत्व विदेशी मुद्रा का एक अभूतपूर्व स्रोत बन गया है। एक बार उग जाए तो विशेष देखभाल की आवश्यकता नहीं रहती। इसके भी असंख्य उपयोग हैं। हलका जल, कट जाए तो मोटी पत्ती को छीलकर उस स्थान पर रखकर बाँध दें, न जलन रहेगी, न दाग पड़ेगा, घाव भर जाएगा। नित्य बदलते रहें। घृत कुमारी का गूदा १ किलो आटे में २०० ग्राम मिलाकर गूंथ लें। इसकी रोटी खाने से यकृत ठीक रहेगा, पाचन होगा, गैस नहीं बनेगी और गैस बनने से जो हृदय रोग की सी अवस्था हो जाती है उससे बचाव होगा। नेत्राभिष्यन्द (आँख आना) की अवस्था में इसका पत्ता छीलकर थोड़ी सी हल्दी लगाकर नेत्र पर बाँध दें। जलन, दर्द में तत्काल लाभ होकर १-२ दिन में बिल्कुल सामान्य हो जाएगा। जोड़ों के दर्द में में पत्ती के अन्दर का भाग छीलकर निकाल लें, इसे १०-१५ ग्राम की मात्रा में गोघृत में तल लें। इसे प्रातः सायं खायें तथा १०० ग्राम एरण्ड तेल में मेथी एवं अजवायन १२-१२ ग्राम पकाकर जोड़ पर मालिश करके गर्म कपड़ा बाँध दें।

(३) पुदीना - यदि पुदीने की चटनी भोजन के साथ ली जाय तो उदर में हैजे के जीवाणु पनप नहीं सकते है। पाचन ठीक होगा, मल आँतों में नहीं सड़ेगा तथा गैस नहीं बनेगी तथा उसी प्रकार गैस के कारण हृदय पर दबाव की स्थिति दूर होगी। सत पुदीना भी इसी प्रकार उपयोगी होता है। इसे समान भाग सत अजवायन तथा कपूर के साथ मिलाकर शीशी में भरकर कॉर्कबन्द करके धूप में रखने से सब मिल जाते हैं। २ से ५ बूंद तक पानी में मिला कर उदर रोगों में इसका प्रयोग करें। पूरे वर्ष प्रयोग के लिए सुखाकर रख लें। इसके स्थान पर हरा धनिया प्रयोग किया जा सकता है।

(४) गुलाब - सौन्दर्य का प्रतीक गुलाब चिकित्सा में भी उतना ही उपयोगी है। इसकी पंखुड़ियों को समान भाग चीनी के साथ काँच के बर्तन में ऊपर नीचे तह जमाकर बन्द करके धूप में रख दें। यह गुलकन्द आँतों को शुद्ध करता है। शीतलता देकर अम्ल-पित्त-खट्टी डकार व जलन में आराम पहुंचाता है।

(५) पत्थरचटा - दर्दमार इसे अजूबा भी कहते हैं। इसकी पत्ती को मिट्टी में दबाने से नए पौधे निकल आते हैं। पेटदर्द में इसके ताज़े पत्ते कूटकर देने का पुराना प्रचलन है। यदि इसके पत्तों का रस आधा कप दिन में दो बार पिया जाए तो गुर्दे, मूत्राशय आदि में अश्मरी (पथरी) होने का भय नहीं रहता। यदि छोटी पथरी हो तो निकल जाती है।

(६) गिलोय - नीम पर चढ़ी गिलोय सर्वोत्तम है। गिलोय का नित्य प्रयोग करने वाले को कोई रोग नहीं सताता। १० ग्राम गिलोय का चूर्ण १ कप पानी में रात्रि में भिगो दें। प्रातः काल मसलकर छान लें। इसे पीने से यकृत ठीक काम करता है, पाचन होता है। यह द्रव्य रसायन है। दीर्घायु प्रदान करती है।

(७) उपोदिका या पोई - इसे बंगाल में घर-घर में लगाया जाता है। हरे तथा लाल तने वाली दो तरह की बेल होती है। इसकी पत्तियों का साग बनाकर खाते हैं। सूजन में पत्ती पर सरसों का तेल लगाकर गर्म करके बाँधते हैं। प्राकृत अवस्था में होने से यह बहुत उपयोगी है। इसकी पत्तियों का सलाद नींबू, नमक डालकर खाना भी उपयोगी है।

(८) ब्राह्मी - गर्मी के मौसम में ब्राह्मी की ठंडाई बनाकर पीने का रिवाज़ है। यह गर्मी को दूर करके मस्तिष्क को शीतल रखती है साथ ही रक्त दोष भी दूर करती है। बच्चों को १ चम्मच पत्तों के रस में मधु मिलाकर नित्य देने से स्मरण शक्ति बढ़ाने के लिए प्रयोग करें।

वर्ष भर प्रयोग करने के लिए छाया में सुखाकर बन्द डिब्बों में रखना चाहिये।

(९) बाँसा – बाँसा उत्तम जीवाणु प्रतिरोधक है। श्वास–कास में इसके पंचांग को पकाकर उसमें मधु मिलाकर देने से लाभ होता है। गुड़ या चीनी मिलाकर देने से रक्त, पित्त, मुख या मलद्वार से रक्त आने में लाभ होता है।

(१०) गेंदा – त्वक् रोगों में इसी को "कैलेन्डुला" के नाम से होम्योपैथी में प्रयोग किया जाता है। यदि चाकू से कट जाए, रक्त बन्द न हो तो इसके फूल को पीसकर बाँधने से लाभ होता है। सामान्य कर्णस्राव में फूलों को तेल में पकाकर रख लें। इसे त्वचा पर घाव, चोट, रक्तस्राव की अवस्था में लगाना चाहिये।

(११) अश्वगन्धा – बढ़ती आयु में जब यौन दौर्बल्य होने लगे, हाथ, पैर, कमर में वेदना हो, थकान हो, नींद कम आये तो समझिये अश्वगन्धा प्रयोग करने का समय आ गया है। इसकी वर्ष भर पुरानी जड़ें निकालकर धोकर, सुखाकर चूर्ण बना लें। ५–५ ग्राम चूर्ण दूध से प्रातः सायं प्रयोग करें।

(१२) शतावरी – इसकी सुन्दर बेल गेट पर या किनारे पर लगाते हैं। एक–दो वर्ष पुरानी बेल के नीचे से जड़ निकालकर धोकर, सुखाकर, चूर्ण बनाकर रख लें। ५–५ ग्राम चूर्ण प्रातः सायं दूध से देने से धातु पुष्टि होकर रोग प्रतिरोधक शक्ति बढ़ती है। जिन माताओं को दूध नहीं बनता उनके लिए उपयोगी है। प्रदर आदि रोग भी दूर होते हैं।

(१३) वचा–कड़वी वचा – इसे पानी की ज्यादा आवश्यकता पड़ती है। इसकी जड़ को २–३ वर्ष बाद निकाल कर, धोकर, सुखा कर रख लें। जब प्रयोग करना हो तो सुपारी के बराबर टुकड़े काटकर १–१ ग्राम की मात्रा में जीभ के नीचे रखकर चूसते रहें। एक घण्टे बाद थूककर पुनः ताज़े टुकड़े रख लें। इस प्रकार बार–बार करने से श्वास–दमा के दौरों की प्रारम्भिक अवस्था में लाभ होता है। खाँसी रुकती है। गले को साफ रखता है। पान में सुपारी की तरह इसे प्रयोग कर सकते हैं। जो बच्चे तुतलाते हैं बोल नहीं पाते उनको १ ग्राम चूर्ण शहद में मिलाकर जीभ के ऊपर रखवायें, लाभ होगा।

(१४) अकरकरा – लाल पीले गोल फूल वाले इस पौधे को क्यारियों में अक्सर लगाया जाता है। इसे मुख तथा दन्त शुद्धि के लिए उपयोग करते हैं। पुरानी जड़ों को धोकर, सुखाकर, महीन चूर्ण बनाकर मंजन करने से दाँत तथा मसूड़े मज़बूत होते हैं।

अश्वगन्धा, शतावरी, अकरकरा का समान भाग चूर्ण बनाकर उत्तम पौष्टिक, रसायन, बाजीकरण, वातनाशक योग बनता है। इसे ५–५ ग्राम प्रातः सायं दूध से लें। स्त्री एवं पुरुष दोनों के लिए उपयोगी है।

(१५) अर्कपत्री – इसे दरवाजे (गेट) के ऊपर, रास्ते के दोनों ओर या गमले में लगा सकते हैं। बेल वर्ष भर हरी–भरी रहती है। इसकी एक–एक पत्ती ६ दिन प्रातः चबा कर खाने से असाध्य श्वास रोग को प्रारम्भिक अवस्था में रोका जा सकता है। छींक ज्यादा आना, एलर्जी, श्वसन–संस्थान की दुर्बलता को दूर करता है।

पर्यावरण की शुद्धि आज एक महत्वपूर्ण समस्या है। ये वृक्ष पर्यावरण शुद्धि के साथ–साथ रक्षा में भी उपयोगी हैं। पूजा–पाठ से भी इसीलिये हमारे पूर्वजों ने इन्हें जोड़ा कि ताकि इनकी रक्षा हो सके।

पर्यावरण की शुद्धि के लिये १५ महत्वपूर्ण वृक्ष निम्न हैं –

१. जामुन, २. नीम, ३. हरड़, ४. बहेड़ा, ५. आँवला, ६. पीपल, ७. बरगद, ८. बेल, ९. अर्जुन, १०. अशोक, ११. सहजन, १२. पपीता, १३. अमलतास, १४. वरुण और १५. शिरिष।

इन सभी वृक्षों के भी अन्यतम औषधीय उपयोग हैं। इन सभी वृक्षों को समुचित मात्रा में लगाकर हम न केवल अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखेंगे वरन् वातावरण को भी स्वस्थ बनाने में सहयोग करेंगे जिनसे भावी पीढ़ियाँ भी सुखी रह सकेंगी।

जीवनीय में प्रस्तावित परिवर्तन

यह तो सर्वविदित है कि पिछले दिनों में कागज, निगेटिव व छपाई आदि के मूल्यों में बेतहाशा वृद्धि हुई है। इस तेजी के बावजूद हमने जीवनीय के कलेवर, छपाई व पठन–सामग्री को लगातार और अधिक आकर्षक, ज्ञानवर्द्धक एवं उपयोगी बनाने का प्रयास किया है। सम्पादक मण्डल ने यह भी निर्णय लिया है कि अगले वर्ष के प्रथम अंक (शिशिर, जनवरी १९९२) से जीवनीय और भी अधिक सुन्दर एवं बड़े आकार में आपके समक्ष प्रस्तुत हो।

ऐसी दशा में स्वाभाविक है कि जीवनीय के मूल्य व वार्षिक चन्दे में भी वृद्धि अपरिहार्य होगी। पाठकों की माँग पर जीवनीय में प्रस्तावित यह परिवर्तन आशा है सभी सराहेंगे और बढ़ी हुई दरों के बावजूद जीवनीय आपकी व आपके परिवार की पसन्द की प्रमुख पत्रिका बनी रहेगी।

सम्पादक

धनिये की पत्तियाँ

प्रकृति का विटामिनी उपहार

डॉ. सुनन्दा रानाडे, पुणे

खाने की मेज़ पर धनिये की पत्तियों से सजे हुए व्यंजन बड़े ही नयनाभिराम लगते हैं। धनिये की हरी पत्तियाँ व्यंजनों को, विशेष रूप से सामिष व्यंजनों को सुगन्धित बना देती हैं। न केवल ये पत्तियाँ स्वाद और सुगन्ध से भरी हैं अपितु इनमें औषधीय गुण भी भरपूर हैं। ये पत्तियाँ जो विटामिन-ए का समृद्ध स्रोत हैं रतौंधी की रोकथाम के लिये उपयोगी हैं। धनिये की पत्तियाँ और बीज दोनों ही औषधीय उपयोग में प्रयुक्त होते हैं। दोनों में एक उड़नशील तेल होता है जिसका प्रतिशत बीजों में अधिक है। धनिये की पत्तियों से बनायी हुई चटनी और बड़ों में विटामिन-ए का प्रतिशत पर्याप्त होता है। इन रुचिकर व्यंजनों को हर गृहिणी बना सकती है।

चटनी : एक कटोरी कटी हुई धनिये की पत्तियाँ लें इसमें आधी कटोरी ताज़ा नारियल का कसा चूरा मिलायें, दो हरी मिर्च काट कर डालें और स्वाद के अनुसार नमक और चीनी मिलायें। इस मिश्रण को अच्छी तरह ठीक से पीसें। दूसरी ओर मीठी नीम की चन्द पत्तियाँ तेल में तलें, ठंडी होने पर उन्हें कुचल कर एक चम्मच नींबू के रस के साथ उपयुक्त पिसे हुए मिश्रण में मिला दें। अब दो चम्मच मूँगफली का तेल गरम कर के उसमें कुछ सरसों के दाने, हींग और आधा चम्मच पिसी हल्दी डालें। यह बघार

चित्र डॉ. एच.पी. शर्मा

जब ठंडा हो जाये, तो चटनी में डाल दें। चटनी तैयार है।

बड़ा : ४ कटोरी धनिये की पत्तियों में एक कटोरी बेसन या मूंग का आटा, पिसी अदरक एक चम्मच, पिसी हल्दी और लाल मिर्च एक-एक चम्मच तथा स्वाद के अनुसार नमक मिलायें। इसमें थोड़े से भुने हुए तिल भी मिला लें। फिर थोड़ा पानी लेकर इन सबको आटे की तरह गूंथ लें। एक थाली लें, उस पर तेल चुपड़ दें और तब इस गुंथे हुए आटे को थाली पर पीट-पीट कर समान रूप से फैलायें। इसे कुकर में पकायें। पकने के बाद उसे बड़े की शक्ल में काट लें। फिर इसे मूंगफली के तेल में तल लें। बस, नाश्ता तैयार है।

औषधीय उपयोग

शीत प्रकृति होने से यह पित्त या शरीर की गर्मी को शान्त करता है। धनिये की ताज़ी पत्तियों और बीजों का चिकित्सा में आंतरिक एवं बाह्य दोनों प्रकार का उपयोग किया जाता है।

बाह्य लेप : ग्रीष्म ऋतु या अक्टूबर में तेज धूप के प्रभाव से तीव्र सिरदर्द होने पर धनिये की ताज़ी पत्तियों का स्वरस माथे पर लेप करने से रक्ताधिक्य जन्य सिरदर्द दूर होता है। आधा सीसी में भी यह प्रयोग लाभदायक है।

भिलावे के सम्पर्क से प्रत्यूर्जता (ऐलर्जी) के कारण उत्पन्न ददोरों में ताज़ा धनिये की पत्तियों को पीसकर लगाने से तत्काल लाभ होता है। धनिये के स्वरस को धोने के साबुन के साथ मोच और गठिये जैसे सन्धिशोथ पर लगाने से भी सन्तोषजनक परिणाम प्राप्त होता है। चम्मच भर स्वरस में चुटकी भर पिसी हल्दी मिलाकर हर रात चेहरे पर लगाने से काले मस्से, मुंहासे और चेहरे का रूखापन दूर होता है। यह प्रयोग त्वचा को चमकाकर रूप को निखार देता है।

धनिये के बीज गरम मसाले का प्रमुख घटक हैं। यह सूजन उतारनेवाला और दर्द निवारक है। बीजों का लेप दर्दीले और लाल उभारों पर लगाते हैं। पत्तियों की तरह बीजों का भी प्रयोग सिरदर्द में किया जा सकता है।

आंतरिक प्रयोग : गर्मी के कारण नक्सीर फूटने पर ताज़ा स्वरस नथुनों में टपकाते हैं। इसके नियमित प्रयोग से नाक की बदबू जाती रहती है। आधा सीसी में प्रभावित भाग के नथुने में ताज़ा स्वरस की कुछ बूंदें डालने से तत्काल लाभ होता है। आँख आने पर ताज़ा पत्तियों का स्वरस आँखों में लगाने से अथवा धनिये के बीजों के काढ़े से आँखों को धोने से आराम होता है।

कहा जाता है कि चेचक होने पर आँखों में ताज़ा स्वरस डालने से आँखे सुरक्षित रहती हैं। ताज़ा पत्तियों को चबाने से मुखपाक (मुंह में छाले) दूर होता है और बदबूदार साँस की शिकायत दूर होती है। पत्तियों में विटामिन-सी होता है जिसके कारण पत्तियों के चबाने से पायरिया दूर होता है और दाँतों की सड़न की रोकथाम होती है।

अपच, उल्टी, मुँह के कड़वेपन और पेचिश में एक से दो चम्मच ताज़ा स्वरस को एक गिलास ताज़े मट्ठे में मिलाकर दिन में दो-तीन बार देने से शिकायत दूर होती है। इस प्रयोग से उदरशूल भी दूर होता है।

हर रात एक चम्मच स्वरस में समान भाग शहद मिलाकर लेने से विटामिन ए, बी१, बी२, सी तथा लोहे की कमी से हो सकने वाले सभी रोगों की रोकथाम होती है। इसके नियमित प्रयोग से सामान्य कमजोरी, प्रत्यूर्जता और तमक श्वास की रोकथाम होती है।

बीजों के औषधीय उपयोग

दो चम्मच भर बीजों को कूट कर एक कप पानी के साथ उबालें और ठंडा होने पर छान लें। इस पानी की चुस्कियाँ लेने से अतिशय प्यास दूर होती है। तेज ज्वर की प्यास में यह पेय बड़ा उपकार करता है।

मुट्ठी भर बीजों को कूट लें और एक गिलास पानी में रात भर भिगोये रखें। अगले दिन सवेरे छान लें। इसमें चुटकी भर जीरे का चूर्ण और थोड़ी चीनी मिला लें। पेशाब करते समय जलन होने की शिकायत में यह पेय दो सप्ताह तक दिन में दो बार पियें (इस पेय के अतिसेवन से जुकाम सम्भव है)।

पित्त के अतिरेक से हाथ व पैर में जलन होने पर धनिये और जीरे का काढ़ा बनाकर उसमें दूध मिलाकर पीना चाहिये।

इस प्रकार यथेष्ट मात्रा में सुविधापूर्वक मिलनेवाला धनिया जो कि विटामिनों का समृद्ध स्रोत है और सार्वदैहिक कमजोरी भी दूर करता है, जनसाधारण के लिए प्रकृति का वरदान ही है।

पृष्ठ २४ का शेष - ग्रह ...

चन्द्रमा

जिस प्रकार सूर्य पुरुष के लिए उसी प्रकार चन्द्रमा स्त्री के लिए जीवनदाता होता है। स्त्री की कुण्डली में चन्द्रमा की स्थिति और अन्य ग्रहों से सम्बन्ध पर स्त्रियों की जीवन-लीला की अवधि दीर्घ या अल्प होती है।

यदि चन्द्रमा शुक्लपक्ष का हो तो वृद्धिगत होने के कारण बलवान् होता है। कृष्ण पक्ष की अष्टमी से अमावस्या तक चन्द्रमा निर्बल होता है।

जलीय राशियों में तथा सम राशियों में चन्द्रमा बलवान् तथा अग्न्यात्मक और विषम राशियों में बलहीन होता है। पार्थिव और वायवीय राशियों में मध्यम होता है।

महागुणकारी लहसुन

आयुर्वेदाचार्य एस.ए.खान, लखनऊ

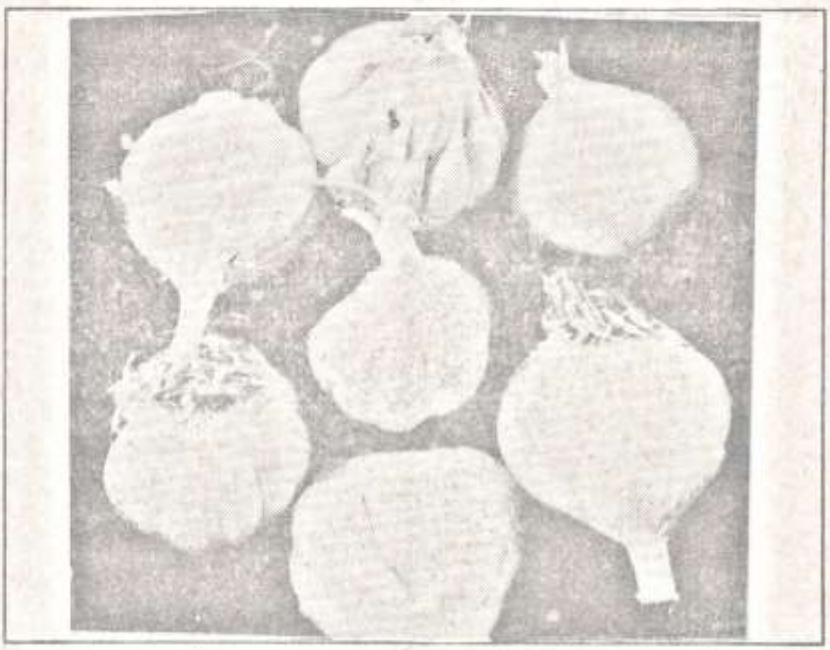

लहसुन इतना सुपरिचित कन्द है कि इसे खाने वाले तथा इससे परहेज़ करने वाले सभी इसे जानते हैं। लहसुन एक महौषधि है। सम्भवतः इसकी रक्षा के लिये प्रकृति ने इसमें दुर्गन्ध पैदा की है। जो इसके असंख्य औषधीय और रसायन गुणों का लाभ उठाना चाहते हैं उन्हें इसकी दुर्गन्ध को सहन करना ही पड़ेगा। इसकी दुर्गन्ध भी शरीर के लिये लाभदायक ही है। इसके प्रयोग से पित्त का स्राव अधिक होने लगता है अतः पित्तज प्रकृति वाले व्यक्तियों या पित्तज रोगों से पीड़ित रोगियों को इसका सेवन नहीं करना चाहिये, कम करना चाहिये या युक्तिपूर्वक घी आदि के साथ प्रयोग करना चाहिये। वृद्धों और बच्चों के लिये तो यह अमृत के समान है। साथ में वात कफ शामक आहार–विहार का भी सेवन करना चाहिये।

भाषावार नाम : हिन्दी – लहसुन; संस्कृत – रसोन, लशुन; बंगाली – रशुन; मराठी – लसूण; गुजराती – लसण; पंजाबी एवं सिन्धी – गलि, थूम; कन्नड़ – रोहन; अरबी – सूम, फूम; फ़ारसी – सीर; मा. – लहसण; अंग्रेज़ी – गार्लिक; लैटिन – *एलियम सेटाइवम।*

आयुर्वेदानुसार गुण

अम्ल को छोड़कर इसमें सभी ५ रस पाये जाते हैं परन्तु कटु रस प्रधान होता है। इसके कन्द में कटु रस की प्रधानता होती है। पौधे के अन्य भागों में अन्य रसों की प्रधानता होती है। इसका वीर्य (तासीर) गर्म होता है। विपाक भी कटु होता है। यह उत्तम वात कफ शामक और पित्त सारक होता है।

औषधीय मात्रा : २ से ४ ग्राम तक।

औषधीय गुण

यह चिकना, गरम, तेज़, लसलसा (पिच्छिल), भारी, सर, वात को निकालने वाला (गैस खारज कराने वाला), शुक्र वर्द्धक, स्मरण–शक्ति वर्द्धक, कृमिहर, सफेद दाग, कोढ़ नाशक, टूटी हड्डियों को जोड़ने वाला, वात की बीमारियों, हृदय रोग, उदर शूल, कब्ज़, गुल्म, अर्श, शोथ (टी.बी.), अग्निमांद्य और वात कफ शामक है।

कुछ औषधीय उपयोग

सूखी खाँसी (वातज कास) : जब शुष्क कास आती हो, कास के वेगों के साथ पसलियों में दर्द होता हो, बलग़म बिल्कुल न निकलता हो, ऐसी स्थिति में कच्ची लहसुन २ से ४ माशा चबाकर गुनगुना पानी पीना चाहिये। श्वास में भी लाभदायक है।

जीर्ण प्रतिश्याय : जब बार–बार जुकाम होता हो तो लहसुन के लगातार प्रयोग से लाभ होता है।

पुराना कब्ज़ : पुराने कब्ज़ में प्रातः तथा शाम कच्चा लहसुन प्रयोग करने से कब्ज़ दूर होकर मल साफ होता है। भूख लगने लगती है। पाचन क्रिया सुधरती है। आँतों की सूजन हो तो कम होकर उदर हल्का हो जाता है।

गैस बनना : जिन लोगों को गैस अधिक बनती है उन्हें कच्चा लहसुन प्रयोग करना चाहिये या ३० ग्राम अजवायन, ३० ग्राम काला नमक, ३० ग्राम लहसुन, ५ ग्राम हींग

घी में भुनी (असली हींग) पीसकर मटर के बराबर गार्लिक बना लेनी चाहिये। २ से ४ गार्लिक उष्ण जल या मट्ठे से लें।

अग्निमांद्य या धातुज अग्नि मांद्य : इसमें पहले जठराग्नि का अग्निमांद्य होता है फिर धीरे–धीरे जब आमरस और आमदोष धातुओं में पहुँच जाता है तब अन्न रस से रक्त, मांस, मेद, अस्थि आदि धातुओं का उत्तरोत्तर सम्यक निर्माण नहीं हो पाता, ऐसी स्थिति में रक्तवाहिनियों में अपक्व मेद जमने लगता है तथा रक्त में भी मेद मिल जाता है। इसको "रक्तगत कोलेस्ट्रॉल" कहते हैं यदि कच्चे लहसुन को लगातार प्रयोग किया जाये तो रक्त में कोलेस्ट्रॉल की मात्रा कम हो जाती है।

"गार्लिक पर्लस" या लहसुन की गन्ध समाप्त करने के लिये उसे २४ घन्टे खट्टी दही या मट्ठे में भिगोकर रखने या तेल में तलकर पाउडर बना लेने से यह उतना गुणकारी नहीं रहता जितना कि ताज़ा रहता है।

वात की बीमारियाँ : शियाटिका, आमवात, सन्धिवात, लकवा, वातज, शिरः शूल, उदर शूल, पसलियों में दर्द आदि सभी वात रोगों में लहसुन लाभदायक है। इसे लगातार नियम से ३ माह तक प्रयोग करें।

● आमवात, जोड़ो का दर्द, पसलियों में दर्द, सर्दी के कारण दर्द आदि में लहसुन की जड़ को तेल में जलाकर मालिश करने से लाभ होता है।

● वृद्ध लोगों के लिये यह महौषधि है, रसायन है, अमृत है। वृद्धावस्था में वात कफ का प्रकोप होता है और लहसुन अच्छा वात कफ शामक होता है। अतः वृद्धों को इसका उपयोग नियमित रूप से करना चाहिये। धमनी काठिन्य, रक्तज कोलेस्ट्रॉल व वात के स्वाभाविक प्रकोप का शमन होकर वृद्ध लोगों को इसके गुणों का लाभ प्राप्त होगा। परन्तु उन्हें जहाँ तक हो सके एक पोतिया लहसुन की व्यवस्था करके उसे ही सेवन कराना चाहिये।

लहसुन सेवन के अयोग्य व्यक्ति : पित्तज (उष्ण) प्रकृति, अर्श के रोगी, गर्भवती स्त्रियाँ व कृश (अत्यन्त दुबले) पुरुषों को इसका प्रयोग नहीं करना चाहिये।

लहसुन प्रयोग के समय परहेज : अधिक शारीरिक श्रम, धूप का सेवन, क्रोध, दूध का अति सेवन, गुड़, दही का सेवन, दिन में सोना, मछली का सेवन, रात्रि जागरण, अधिक यात्रा करना, तेल में तले–भुने पदार्थ, सिरका, क्षार द्रव्यों व मद्य का सेवन नहीं करना चाहिये। इनके सेवन से पित्त के प्रकोप की सम्भावना रहती है।

कन्दों का राजा : रसोन

कुछ औषधीय प्रयोग

श्रीमती सुनन्दा रानाडे, पुणे

● **अजीर्ण और अग्निमांद्य में :** लहसुन का शर्बत १ चाय चम्मच ताज़े पुदीने का रस और आधा चम्मच अदरख के रस के साथ देना चाहिये।

● बच्चों के बलगम को पतला करने के लिये लहसुन को कड़वे तेल में पकाकर गुनगुना होने पर छाती और गले पर मलने से लाभ होता है।

● काली गाय के ५ लीटर दूध में १० पुतिया पिसा लहसुन, एक चम्मच इलायची पाउडर और २ इंच के दो टुकड़े दालचीनी पीसकर कपड़े की एक पोटली बनाकर डालें। धीरे–धीरे दूध को पकायें जब दूध गाढ़ा होने लगे तब पोटली को दबाकर दूध में निचोड़ दें और दूध को चलाते जायें जब दूध का खोया बन जाये तो उसे आग पर से उतार लें। खोये के बराबर शहद मिला लें। पोटली का बाकी कचा रस भी दबाकर निचोड़ लें। एक चम्मच ज़ाफ़रान, एक बड़े चम्मच शुद्ध गुलाबजल में घोलें और खोये में मिला दें। ठन्डा करके एक जार में सुरक्षित रख लें। खाने के बाद दूध या पानी से दो बार दें। कास और दमा की यह अति उत्तम औषधि है। लकवा, नाड़ी शोथ, हाथों की नाड़ियों की कमज़ारी से काँपने में लाभदायक है। स्वस्थ लोग यदि एक बार नियमित रूप से लें तो शक्तिवर्द्धक, आयुवर्द्धक है।

● **वातज व्याधियाँ :** आमवात, सन्धिवात और नाड़ियों के शोथ (वात प्रकोप) आदि के रोगियों को वर्धमान रसायन की तरह इसका प्रयोग करना चाहिये।

● **वर्धमान लहसुन रसायन :** ४ जवा लहसुन दूध में उबालकर छानकर सोने के समय लें। रोज एक जवा लहसुन बढ़ाते जायें जब तक १० जवा न पहुँच जायें। फिर एक जवा लहसुन रोज घटाते जायें जब तक ४ जवा न आ जायें। इस प्रक्रिया को ४० दिन तक करें।

● शोथ, मूत्रकृच्छ, विषम ज्वर और जीर्ण ज्वर में २५ मि.ली. लहसुन का क्वाथ तीन बार दिन भर में दिया जाता है। एक गिलास जल में १० जवा लहसुन कुचल कर डालें और उबाल लें। १/४ रहने पर उतार कर छान लें।

● दर्दनाशक के रूप में इसका कल्क जोड़ों पर प्रयोग करते हैं या स्वरस को शूल युक्त पसलियों पर लगाते हैं।

गाजर

पं० माधवाचार्य, लखनऊ

यह शीत ऋतु की फसल है। समशीतोष्ण जलवायु में यह वसन्त, ग्रीष्म और पतझड़ के मौसम में तथा उष्ण एवं उपोष्ण कटिबन्धीय जलवायु में जाड़ों में होती है। यह एक वार्षिक या दोसाला पौधे का कन्द है। पौधे की उत्पत्ति एक मोटी मांसल जड़ से होती है, जो ५ से.मी. से ३० से.मी. तक लम्बी होती है। यह पौधा ३० से.मी. से १२० से.मी. तक ऊँचा होता है। गाजर के पौधों में संयुक्त छत्रक लगते हैं। फूल प्रायः सफेद या पीले होते हैं जिनमें छोटी-छोटी पंखुड़ियाँ होती हैं।

गाजर प्रायः तीन रंग की पायी जाती है, लाल, पीली और काली। यह मधुर एवं स्वादिष्ट होती है। लाल और काली गाजर गुणकारी है, जबकि पीली गाजर गुण और स्वाद में हीन होती है। गाजर में कैरोटीन, शर्करा, स्टार्च, ऐल्ब्युमिन, मैलिक एसिड, लवण, एक उड़नशील तेल तथा पर्याप्त लौह भी होता है। गाजर के बीज सौंफ से बहुत मिलते-जुलते होते हैं। बीजों में एक प्रकार का पीला, गाजर के समान सुवासित और चरपरा उड़नशील तेल होता है।

गाजर कटु, तिक्त, उष्णवीर्य, कटु विपाकी, तीक्ष्ण, विदाही, दीपन, रुचिकारक, रूक्ष, ग्राही, रक्तपित्त-कफ-कृमिनाशक है।

वृक्कों पर गाजर उत्तम प्रभाव डालती है। जलोदर के रोगी यदि इसका सेवन करें तो उन्हें यह मूत्र अधिक मात्रा में लाकर आराम पहुँचाती है। चर्म रोगों में गाजर के बीजों को पीसकर लेप करने से बहुत लाभ होता है। कच्ची गाजर खाने से आँतों के कीड़े नष्ट होते हैं और वे भविष्य में आँतों में पुनः पनप भी नहीं पाते। इसके लिए आवश्यक है कि गाजर के मौसम में लगभ १०० ग्राम तक गाजर यथासम्भव नित्य खायी जाय। गाजर का हलुवा अति पौष्टिक है। मासिक-धर्म में कमी, गर्भाशय-शूल तथा विलम्ब प्रसव में गाजर के बीजों का काढ़ा अत्यन्त लाभदायक है।

बच्चों की सामान्य कमजोरी में गाजर का रस बहुत उपयोगी पाया गया है। जिस बच्चे का स्वास्थ्य नाजुक हो, बार-बार बीमार पड़ता हो, खून की कमी हो, उस बच्चे को गाजर का रस दस ग्राम कुछ दिनों तक नियमित पिलायें। इससे बच्चे का विकास, जो अवरुद्ध था सुचारु रूप से होने लगेगा।

प्रायः बच्चे चीनी, टॉफी अधिक खाते हैं जिससे उनके पेट में कीड़े पड़ जाते हैं। ये कीड़े खाये-पिये का रस, रक्त आदि नहीं बनने देते। इससे बच्चे धीरे-धीरे कमजोर पड़ जाते हैं। बड़े लोगों के पेट में भी कीड़े पड़ते हैं। जिसके पेट में कीड़े पड़ जाते हैं वह नींद में अपने दाँतों को बजाता या किटकिटाता है। ऐसे लोगों को एक महीने तक नित्य २०० ग्राम की मात्रा में गाजर का रस पीना चाहिये। बच्चों को उनकी अवस्था के अनुसार ५० ग्राम से १०० ग्राम तक गाजर का रस पिलाना चाहिये।

स्त्रियों से सम्बन्धित बीमारियों में गाजर के बीज बहुत काम आते हैं। गाजर के बीज गर्भाशय की शुद्धि करके उसे बल प्रदान करते हैं। इससे माहवारी समय पर होती है और प्रदर रोग में भी लाभ होता है। अतः स्त्रियों से सम्बन्धित रोगों में विशेषतः माहवारी कष्टप्रद होने पर निम्नलिखित प्रयोग आज़मा कर देखें, अवश्य लाभ होगा-

गाजर के बीज - ०७ ग्राम, गुड़ - १४ ग्राम = एक मात्रा।

उक्त एक मात्रा को लेकर २५० मि.ली. जल में उबाल लें। जब आधा जल शेष रहे तो उसे उतार कर कपड़े से छानकर पी लें। यह प्रयोग एक सप्ताह तक नियमित करें।

गाजर का नियमित सेवन करने से आँखों की ज्योति बढ़ती है और चर्म-रोग दूर होते हैं।

ब्रिटिश मेडिकल जरनल 'लान्सेट' में प्रकाशित शिकागो के 'सेन्ट ब्यूक हॉस्पिटल' की एक अनुसन्धान-रिपोर्ट के अनुसार नियमित गाजर खाने से कैंसर का रोग नहीं होता है। यह अनुसन्धान-रिपोर्ट लगभग दो हजार व्यक्तियों पर बीस वर्ष तक किये गये अध्ययन का परिणाम है। उक्त अनुसन्धानकर्ताओं के अनुसार गाजर में "बेटाकेरोटीन" नामक तत्व बहुतायत से पाया जाता है जो कि सिगरेट पीने वालों को भी फेफड़ों के कैंसर से सुरक्षित रखता है।

दूध और उसके उत्पाद

वैद्य र.म. नानल, मुंबई

भारतवासियों को दूध की जानकारी वैदिक युग से ही है। ऋग्वेद में, जो कि वेदों में प्रथम है, दूध के सन्दर्भ बिखरे पड़े हैं। आयुर्वेद के अनुसार दूध का सेवन आजीवन करना चाहिए क्योंकि रसायनों में, जीवनीय द्रव्यों में दूध और घी का नित्य सेवन श्रेष्ठ है, *"क्षीरघृताभ्यासो रसायनानाम्"*। दूध स्वभाव से ही जीवनदायी है, *"तत् स्वभावात् क्षीरं जीवयति"*। इसीलिए चरक कहते हैं –

तदेवंगुणमेवौजः सामान्यादभिवर्धयेत्।
प्रवरं जीवनीयानां क्षीरमुक्तंरसायनम्।।

दूध के गुण ओज के समान हैं अतः जीवन के लिए हितकर द्रव्यों में दूध सर्वश्रेष्ठ है। आयुर्वेद में गाय, भैंस, ऊँटनी, हथिनी, बकरी, भेड़, स्त्री, घोड़ी, गधी आदि तक के दूध का वर्णन किया गया है और कहा गया है कि दैनिक उपयोग के लिए गाय के दूध को ही ग्रहण करना चाहिए। अन्य दूध विशिष्ट परिस्थितियों में ही निर्दिष्ट हैं जैसे नवजातकों और शिशुओं को माँ का ही दूध पिलाना चाहिए, *"मातुरेव पिबेत् स्तन्यम्"*, अनिद्रा और अतिशय भूख की शिकायत में भैंस के दूध का और सूखा रोग तथा खांसी में बकरी के दूध का सेवन करना चाहिए।

दूध को धारोष्ण पीना चाहिए क्योंकि वह अमृत के समान है, *"धारोष्णं अमृतोपमम्"*। दुहने के तत्काल बाद के, बगैर आँच के सम्पर्क के गुनगुने दूध को धारोष्ण दूध कहते हैं।

गाय के दूध के गुणों का निर्धारण गाय के रंग, उसकी स्थिति (वह हाल में ब्याही है, ब्याये हुए बहुत समय बीत गया है, बिना बछड़े की है या बकैनी है), उसके आहार, निवास-स्थल, दुहने का समय (सवेरे, शाम या दोपहर) आदि पर किया जाता है।

दही

भाव प्रकाश निघण्टु में दही के निम्न गुण बताये गये हैं –

रोचनं दीपनं वृष्यं स्नेहनं बलवर्धनम्।
पाकेऽम्लमुष्णं वातघ्नं मांगल्यं बृंहणं दधि।।
पीनसे चातिसारे च शीतके विषमज्वरे।
अरुचौ मूत्रकृच्छ्रे च दधि शस्यते।।

दही भूख बढ़ानेवाली, वाजीकर, पाचन, चिकनाई पैदा करनेवाली, शक्तिवर्द्धक, पाचन के बाद अम्ल, प्रकृति से उष्ण, वात का नाश करनेवाली, मंगलकारी और शक्तिदायक है। नासार्ति, अतिसार, जूड़ी, अनियमित ज्वर, क्षुधानाश, मूत्रकृच्छ (पेशाब में जलन) और दुर्बलता में दही गुणकारी है।

मट्ठा

शोफार्शो ग्रहणी दोष मूत्रग्राहोदरारुचौ।
स्नेहव्यापदि पाण्डुत्वे तक्रं दद्याद्वरेषु च।।

शोथ, बवासीर, सात्म्यीकरण सम्बन्धी विकार (ग्रहणी रोग), मूत्रावरोध, अरुचि, पेट की बीमारियों, स्नेहन से होने वाले विकारों, रक्ताल्पता और विषार्तियों में मटठा देना चाहिए। सामान्यतः शरद, ग्रीष्म और वसन्त ऋतु और कफ के विकारों तथा रक्तपित्त में दही का सेवन वर्जित है।

मक्खन

संग्राहि दीपनं हृद्यं नवनीतं नवोद्धृतम्।
ग्रहण्यर्शोविकारघ्नमर्दितारुचिनाशनम् ।।

ताज़ा मक्खन मलबद्धता (कब्ज़) उत्पन्न करने वाला, भूख बढ़ाने वाला, तेजस्कर (हृदय के लिए गुणकारी), सात्म्य सम्बन्धी विकारों, बवासीर, आघात और अरुचि का नाशक है।

शरद्वसन्तग्रीष्मेषु प्रायशो दधि गर्हितम्।
रक्तपित्तकफोत्थेषु विकारेष्वहितं च तत्।।
स्मृतिबुद्ध्यग्निशुक्रौजः कफमेदोविवर्धनम्।
वातपित्तविषोन्माद शोषालक्ष्मी ज्वरापहम्।।
सर्वस्नेहोत्तमं शीतं मधुरं रसपाकयोः।
सहस्रवीर्यं विधिभिर्हुतं कर्म सहस्रकृत्।।
मदापस्मारमूर्च्छार्यिशोषोन्मादगदज्वरान्।
योनिकर्णशिरः शूलं घृतं जीर्णमपोहति।।

घी स्मरणशक्ति, बुद्धि, जीवनीशक्ति, वीर्य, ओज, कफ और वसा की वृद्धि करनेवाला है। यह वात, पित्त, विष, उन्मत्तता, सूखा रोग, अमंगल और ज्वर का नाशक है। यह स्नेहन द्रव्यों में श्रेष्ठ है, इसकी तासीर ठंडी है, इसका स्वाद मधुर है और पचनोत्तर परिणाम भी मधुर है। समुचित प्रकार से प्रसंस्कृत करने पर इसके गुणों में हजार गुनी वृद्धि हो जाती है और तब घी हजारों प्रकार से प्रभावशाली हो जाता है। पुराना घी नशा, मिर्गी, बेहोशी, सूखा रोग, पागलपन, विष, ज्वर तथा योनि, हृदय के रोगों को तथा कान और सिरदर्द को दूर करता है।

दादी माँ के नुस्खे

वैद्य बदलू राम रसिक

सरस्वती – दादी माँ, चरण स्पर्श।

दादी माँ – प्रसन्न रहो बेटी, आज बड़े–बड़े झोले लिये कहाँ जा रही हो?

सरस्वती – दादी माँ, हमारी दादी और गाँव के कई बूढ़े–बूढ़िया पैर में गठिया रोग से परेशान हैं उनके लिये महानारायण तेल और योगराज गुग्गुल लेने जा रही हूँ आप खाने के लिये कोई अच्छी दवा बताइये तथा और भी जो कुछ अच्छी बातें स्वास्थ्य के लिये लाभकारी हों बताइये।

दादी माँ – अच्छा, निकालो कॉपी और लिखो दवा। एक दवा मेथी के लड्डू लिखो।

सरस्वती – बोलो दादी माँ, मगर ऐसी चीज बताइयेगा जो हर गरीब–अमीर के लिये बनाने में सुविधाजनक हो।

दादी माँ – लिखो बेटी, मेथी २५० ग्राम लेकर पीस लें और असगंध, सतावर, सोंठ ५०–५० ग्राम लेकर अलग पीसकर रख लें, खोया अर्थात् मावा ५०० ग्राम लेकर देशी घी में भून लें। गेहूँ का रवा १ किलो लेकर अलग घी में भून लें, चीनी २ किलो लेकर उसको पका कर चासनी २ तार की बनायें ओर उसमें मेथी तथा सब दवाइयाँ डाल दें। रवा और मावा भी डालकर मिलाकर उतारकर हल्का ठंडा होने पर हाथ में घी लगाकर २५–२५ ग्राम के लड्डू बना लें। यह लड्डू नित्य सवेरे या शाम को खाकर ऊपर से एक गिलास हल्का गरम दूध पी लें। इस लड्डू के खाने से कमर का दर्द, गाँठों का दर्द, पेट की वायु, अधिक पेशाब होना, शरीर की कमजोरी दूर होकर शरीर स्वस्थ, मन उत्साह सम्पन्न होता है। इस दवा से स्त्री, पुरुष, वृद्ध व्यक्ति लाभ उठा सकते हैं। अगर कब्ज़ रहता हो तो हरीतकी चूर्ण अर्थात् छोटी हरड़ १०० ग्राम काला नमक २० ग्राम दोनों को पीसकर शीशी में रख लें इसे २ से ३ चम्मच रोज़ रात में लेने से पेट ठीक रहता है और पाखाना भी साफ हो जायगा।

सरस्वती – लिख लिया दादी माँ, मगर यह तो बतायें कि वृद्धावस्था में करीब–करीब सभी बूढ़े व बुढ़ियों के पैर की गाँठों में दर्द होता रहता है और वे चलने फिरने में असमर्थ से होते हैं उनके लिये कोई फायदेमन्द तेल भी बताने की कृपा करें और खाने की दवा अगर कोई हो तो अवश्य बताने की कृपा करें।

दादी माँ – लिखो बेटी, जायफल १०० ग्राम, अजवाइन १०० ग्राम, मेथी १०० ग्राम, रेड़ी के बीच १०० ग्राम (छिलका उतार कर लें), लहसुन २५० ग्राम छील कर लें, तीनों चीजों को कूट पीस लें रेड़ी के बीज तथा लहसुन को एक में मिलाकर पानी से पीस लें। सरसों का तेल ५०० मि.ली. तथा महुआ का तेल ५०० मि.ली. अर्थात् आधा–आधा किलो एक में मिलाकर ५–६ किलों पानी की समाई वाले भगोने में आग पर चढ़ा दें। पहले रेंडी के बीज व लहसुन की पिट्ठी में डालकर करछुल से मिला दें। धीमी–धीमी आँच पर पकायें। १ घंटे में यह तेल पक जायगा जब तेल में बुलबुले उठने लगें तो उतार लें। ठंडा होने छान लें और बोतलों में भर लें और इसमें १० ग्राम कपूर पीसकर मिला दें। बस तेल तैयार है इसकी मालिश करने से वायु की सभी प्रकार की पीड़ा दूर हो जायगी। अब जो लुगदी छानने के बाद बची है उसे एक डिब्बे में भरकर रख लें। जिन लोगों की गाँठों में सूजन हो चलने–फिरने में असमर्थ हों, उनके लिये लुगदी की २५–२५ ग्राम की दो पोटली कपड़े में रखकर बना लें और आग के ऊपर तवा रखकर उस पर पोटली रख कर गरम कर लें, हल्की गुनगुनी पोटली से गाँठ की सिकाई करें जब एक पोटली ठंडी हो जाय तब उसे तवा पर रख कर गरम होने दें और दूसरी पोटली जो गरम हुई है उससे सिकाई करें। इस सेक से सूजन दूर हो जायगी और चलने–फिरने में भी सुविधा होगी।

वायु–विकार के वृद्धों को बादी चीजें जैसे बैंगन, कद्दू, घुइयाँ, कटहल, मटर या मटर की दाल आदि चीजें नहीं खाना चाहिये। तेल की मालिश करने या सेकने के एक घंटे बाद गरम पानी से नहाना चाहिये।

सरस्वती – दादी माँ, इसमें मेथी लड्डू और बाई का तेल लिख लिया। अब यह बतायें कि तमाम बूढ़े आदमी और बूढ़ियों को खाँसी बहुत आती है बलगम बहुत निकलता है इसको रोकने के लिये कौन सी औषधि है।

दादी माँ – लिखो बेटी, अपने देहात में ये सब चीजें आसानी से मिल जायेंगी इनका काढ़ा बनाकर रोज पियें तो खाँसी, नजला, जुकाम, दमा, कफ आना दूर हो जाता है। रूस की पत्ती, लटजीरा की पत्ती १०, भटकटाई की जड़ ४ अंगुल मोटी, गुरच ४ अंगुल, मुलेठी ३ माशा, काली मिर्च १० दाना, तुलसी की पत्ती २० सबको कुचलकर आधा लीटर पानी में भिगो दें रात भर भीगने के बाद सबेरे एक स्टील के भगोने में ढक कर पका लें। जब चौथाई रह जाय तो उतार कर हल्का गुनगुना रहने पर छान लें। इसमें २ चम्मच शहद या चीनी मिला दें और आधा सवेरे आधा शाम को पीने से रोग दूर हो जाता है। ताकत के लिये बादाम ५, मुनक्का ५, खसखस १ चम्मच, काली मिर्च १०, तुलसी की पत्ती २० लें। बादाम को रात में भिगोकर सवेरे छिलका उतार डालें, मुनक्के के बीज निकाल कर डालें, सबको साफ सिल पर पानी से पीस लें और एक कटोरी में उठा लें। भगोने को आग पर चढ़ायें उसमें एक बड़ा चम्मच घी डाल दें। उसी में पिसा हुआ कटोरी वाला सामान डाल कर धीमी आँच पर पका लें। जब भुन जाने की सुगन्ध आने लगे तो उसे हल्का गुनगुना पी जायें। इसमें अगर एक कप दूध भी डाल दें तो अति उत्तम होगा। इस निशास्ते का जाड़े भर सेवन करने से शरीर स्वस्थ और निरोग रहता है।

वृद्धावस्था में च्यवनप्राश २५–२५ ग्राम प्रातः एवं शाम को लेने से बड़ा लाभ होता है। च्यवनप्राश के साथ एक गिलास दूध लेना आवश्यक है। वृद्धावस्था में शरीर में सरसों के तेल की रोज मालिश करके स्नान करने से बड़ा लाभ होता है।

वृद्धावस्था में वायविडंग ५० ग्रा, मुलेठी ५० ग्राम दोनों को पीस छानकर २–२ ग्राम प्रातः और शाम को एक गिलास दूध या पानी के साथ जाड़े भर लेने से शरीर में कोई रोग नहीं रहता है। यह शरीर का काया–कल्प कर देता है।

पृष्ठ २१ का शेष

बुढ़ापा ...

वात कफ शामक चीजें : जैसे असगन्ध, पिपली, लहसुन, जीरा, अजवायन, मेथी के बीज, काजू, इलायची, हींग, अदरक, सोंठ, काली मिर्च, कड़वा तेल, तिल का तेल, तिल आदि का समुचित नियमित प्रयोग करें।

- हल्का सुपाच्य और अपनी पाचन–शक्ति के अनुसार नियमित भोजन करें। कम चिकनाई युक्त भोजन करें। शुद्ध सरसों (पीली) का तेल प्रयोग करें। गरिष्ठ और पिष्ठी युक्त भोजन कम प्रयोग करें।
- दूध, घी, अण्डा, जंगली पशु–पक्षियों का मांस प्रयोग करें। पालतू–घरेलू पशु–पक्षियों का मांस भारी होता है इसे प्रयोग न करें।
- देशी घी थोड़ी मात्रा में अवश्य प्रयोग करें परन्तु उसमें अदरक, सोंठ या लहसुन का कल्क (चटनी) डालकर घी में पका लें जिससे घी का कफवर्धक गुण समाप्त हो जाय।
- सम्भोग से बचें क्योंकि शुक्र नष्ट तो हो जाता है जो सातों धातुओं का परम् श्रेष्ठ भाग होता है। इससे शरीर की सभी धातुओं में क्षीणता आ जाती है। परन्तु उसकी क्षतिपूर्ति नहीं हो पाती है क्योंकि वृद्धावस्था में धातुओं के सम्यक निर्माण की क्रिया धीमी पड़ जाती है। रसायनों के सेवन से इस क्रिया में सुधार हो सकता है। अतः युवावस्था की भाँति सम्भोग में प्रवृत होना अपनी आयु को घटाना है।
- यदि आप कफज प्रकृति के हों तो कुछ उष्ण प्रकृति की वस्तुओं अम्बर कस्तूरी, बादाम आदि का सेवन करके या कोई दीपन पाचन औषधि जैसे चित्रकादिवटी, अग्नितुण्डीवटी, हिंग्वाष्टकं चूर्ण, कुमार्यासव आदि का प्रयोग करके अपना पाचन ठीक रखें जिससे खुलकर भूख लगे, साफ शौच हो, पेट भारी न हो तथा इन्द्रियाँ प्रसन्न रहें।
- यदि आप वातज प्रकृति के हों तो कुछ वात शामक पदार्थ – घी, दूध, मुनक्का, अंगूर, असगन्ध, लहसुन, जटामांसी, ब्रह्मी, शंखपुष्पी, बादाम का प्रयोग करते रहें। विबन्ध रहने पर एरण्ड तेल का प्रयोग बीच–बीच में करते रहें।
- शाकाहारी भोजन को वरीयता दें।
- लहसुन का नियमित प्रयोग वृद्धों के लिये महौषधि है।
- तनाव मुक्त पूर्ण ईश्वर को समर्पित जीवन व्यतीत करें।
- यदि उपरोक्त सावधानी के बावजूद भी कोई रोग हो जाये तो इसे हरि इच्छा समझकर प्रकृति की फैक्ट्री में निर्मित जड़ी–बूटियों से चिकित्सा करें। वृद्धों के लिये यही सबसे उपयुक्त है।

धातु पुष्टि के लिए महापौष्टिक पाक

वैद्य शिव कुमार सिंह, गोंडवा, हरदोई

शरद ऋतु समाप्त हो रही है। अतः अब हमारी पाचन क्रिया अच्छी हो गई है। जिन व्यक्तियों की पाचन क्रिया न सही हो वे इसके लिये रात को सोते समय छोटी हरड़ (काली हरड़) का चूर्ण एक तोला की मात्रा में गुनगुने जल से तीन दिन तक नियमित रूप से लें। मैं एक पौष्टिक पाक बनाने की विधि बतला रहा हूँ। इसे प्रत्येक विवाहित व्यक्ति सेवन कर सकता है। कृपया अविवाहित व्यक्ति इसका सेवन न करें। यह पाक सर्दियों में ही शिशिर से हेमन्त तक सेवन करें। क्योंकि इसे पचाने के लिये सर्दी का मौसम ही उपयुक्त होता है।

सामग्री : बिनौलों की गिरी – ५० ग्राम, बादाम की गिरी – ५० ग्राम, उड़द की धुली दाल – ५० ग्राम, काले तिल – ३० ग्राम, शतावर – १० ग्राम, सफेद मूसली – १० ग्राम, काली मूसली – १० ग्राम, अश्वगंधा – १० ग्राम, कौंच के बीज – १० ग्राम, तालमखाना – १० ग्राम, गोखरू – १० ग्राम, बीज बन्द – १० ग्राम, सालिम मिश्री – १० ग्राम, सकाकुल मिश्री – १० ग्राम, बहमन सुर्ख – १० ग्राम, बहमन सफेद – १० ग्राम, कूठ – १० ग्राम, मुलेठी – १० ग्राम, कौंकर की गोंद – १० ग्राम, दालचीनी – १० ग्राम, अकरकरा – १० ग्राम, लौंग – १० ग्राम, छोटी इलायची – १० ग्राम, केशर – ०५ ग्राम, भुनी भांग – २० ग्राम

विधि : बिनौलों की गिरी, बादाम की गिरी, उड़द की दाल, तथा काले तिल, इनको सिल पर पीसकर पीठी बना लें।

फिर शतावर से छोटी इलायची तक सभी वस्तुयें बारीक कूट-पीसकर रख लें।

केशर को गुलाबजल में घोटकर अलग रख लें। पीठी को २०० ग्राम घी में भूरा होने तक भून लें, एक किलो देशी शकर की चाशनी बनाकर, भुनी पीठी चाशनी में डालकर खरल कर लें, फिर सभी पिसी हुई दवायें व भुनी, पिसी भांग सहित मिलाकर खरल कर लें और गुलाबजल में घोटी हुई केशर मिलाकर एक-एक तोले के लड्डू बना लें अथवा घी से चुपड़ी थाली में जमा दें।

सेवन विधि : जिन भाइयों को कब्ज़ रहता हो वे पहले पाचन क्रिया सुधार लें। फिर एक लड्डू सुबह-शाम खाकर ऊपर से मीठा गुनगुना दूध पियें।

अविवाहित व्यक्तियों के लिये निम्न नुस्खा उपादेय है

सामग्री : सेमल मूसरा – १०० ग्राम, सफेद कंद – २०० ग्राम, गोखरू – ५० ग्राम

तीनों का बारीक चूर्ण करके एक तोला चूर्ण सुबह-शाम गाय के दूध के साथ सेवन करें तथा कब्ज़ न होने दें।

पथ्य : सुबह अंकुरित मूँग, मसूर, चना व गेहूँ का अल्पाहार व ताज़ा एवं सादा भोजन।

अपथ्य : अचार, अरहर की दाल, मांस व मिर्च, मसाला।

पृष्ठ २३ का शेष

बुढ़ापा और ...

- नियमित रूप से अध्ययन-मनन कीजिये। लिखने में रुचि हो तो योजनाबद्ध रूप से लिखिये।
- नैतिक मूल्यों की रक्षा करते हुए ही अपने को बदलते हुए परिवेश में ढालिये। न तो पुराने में सब कुछ अच्छा है और न नये में सब कुछ बुरा। नये में से अच्छाइयों का चयन कर उन्हें भी प्रोत्साहित कीजिये।
- आवश्यकतानुसार एकाधिक मेध्य रसायनों, दिमाग को ताकत पहुँचाने वाली औषधियों, जैसे – ब्राह्मी, शंखपुष्पी, मुलेठी, असगंध, जटामांसी, बच आदि या इनसे तैयार किये गए योगों, जैसे – सारस्वत चूर्ण, अश्वगंधादि चूर्ण, सारस्वतारिष्ट, ब्राह्मी वटी, ब्राह्मी घृत, ब्राह्मी या शंखपुष्पी का शर्बत, ब्राह्म रसायन, च्यवनप्राशावलेह का सेवन कीजिये।
- ४० वर्ष की अवस्था के बाद से ही किसी योग्य एवं अनुभवी चिकित्सक से सलाह लेकर अपने शरीर और मन की आवश्यकताओं के अनुरूप रसायन औषधियों का सेवन आरम्भ कर दीजिये। अन्यथा फिर सूखी खेती में पानी देने से कोई लाभ नहीं होगा।
- सर्वोपरि आप आज से ही अपने को बूढ़ा कहना, बूढ़ा समझना छोड़ दीजिये। शरीर और मन दोनों से ही उनकी सामर्थ्य के अनुसार काम लेते रहिये। उन्हें जिलाए और जवान बनाए रखिये।

प्रकृति का अनमोल उपहार

अश्वगंधा

डॉ. चन्द्रशेखर अवस्थी, बाँदा तथा डॉ. शिवशंकर त्रिपाठी, लखनऊ

प्रकृति अपनी गोद में अनेक अमृत तुल्य वनस्पतियों को संजोये हुए है। इन्हीं वनस्पतियों में अश्वगंधा प्रकृति का एक ऐसा अनमोल उपहार है जिसका प्रयोग कर हम एक तरफ अनेक रोगों से बचाव कर सकते हैं वहीं दूसरी ओर शरीर का कायाकल्प भी कर सकते हैं क्योंकि अश्वगंधा रसायन गुण वाली मानी गयी है।

भाषावार नाम : अश्वगंधा को संस्कृत में वाराहकर्णी, बलदा, अश्वरोहक, वाजिगंधा, हिन्दी में असगंध, बंगला में अश्वगंधा, गुजराती में आसंध, घोड़ा आकुन, मराठी में आसंध, तेलुगु में पिनिरू, तमिल में आमकुलांग व अंग्रेज़ी में इसे विंटरचेरी और लैटिन भाषा में *विठैनिया सोम्नीफेरा* कहते हैं।

चिकित्सा में इसकी जड़ का ही अधिक उपयोग होता है। इसके कच्चे मूल से अश्व के सदृश्य गंध आती है इसलिए इसे अश्वगंधा कहते हैं। अश्वगंधा का क्षुप बैंगन के क्षुप के समान सघन होता है। यह १ से ५ फुट तक ऊँचा प्रायः शाखा बहुल होता है इसके फल का आकार मटर के सदृश्य होता है जो अपक्व अवस्था में हरितवर्ण तथा पक्वावस्था में लालवर्ण का हो जाता है। इसकी जड़ ऊपर से धूसर तथा भीतर से श्वेतवर्ण की होती है इसको सुखाकर कूटने से हल्के पीले रंग का चूर्ण बन जाता है। अश्वगंधा की कई जातियाँ मिलती हैं।

चित्र - डॉ. एच.पी. शर्मा, लखनऊ

लेकिन औषधि में अधिकांशतः नागौरी अश्वगंधा के प्रयोग का ही विधान है।

रासायनिक संगठन : अश्वगंधा के मूल में उड़नशील तेल, किस्टलीय विठैनियाल, हैन्ट्रियाकान्टेन, फाइरोस्टेराल प्राप्त होता

है। इसके अतिरिक्त इसमें तीन अल्कालाइड सोम्निफेरीन, सोम्निराल, सोम्नीटाल भी मिलते हैं। इसमें कुछ अंशों में राल, वसा एवं रंजक भी द्रव्य प्राप्त होते हैं।

चिकित्सा में उपयोग

● कमर के दर्द में अश्वगंधा चूर्ण तीन ग्राम लेकर थोड़ा घी मिलाकर सुबह–शाम दूध के साथ सेवन करने से लाभ मिलता है।

● महिलाओं के श्वेतप्रदर में अश्वगंधा चूर्ण २ ग्राम, शुद्ध वंशलोचन आधा ग्राम मिलाकर प्रातः और सायँकाल दुग्ध के साथ लगातार सेवन से अतीव लाभ मिलता है।

● वातरक्त, गंडमाला में अश्वगंधा के साथ–साथ चौपचीनी का भी महीन चूर्ण बनाइये। दोनों समान भाग रखिये। इसको २–४ ग्राम की मात्र में शहद से दिन में तीन बार सेवन करने से इसका प्रभाव सामने आता है।

● बहुमूत्रता में अश्वगंधा चूर्ण और गूलर के कच्चे फलों का चूर्ण दिन में तीन बार दूध के अनुपान से दिया जाना लाभकारी है।

● स्वप्नदोष, शीघ्रपतन में अश्वगंधा, शतावर, कमलगट्टे की गिरी का समभाग चूर्ण बनाकर धारोष्ण दूध के साथ प्रयोग करने से नवयौवन की प्राप्ति होती है।

● छोटे बालकों में अश्वगंधा चूर्ण १/४ ग्राम और बादाम की एक गिरी पीसकर दूध के साथ लगातार देने से शरीर पुष्ट होता है।

● कम्पवात, अनिद्रा में अश्वगंधा चूर्ण २ ग्राम, हरीतकी चूर्ण १ ग्राम वातगजाकुंश रस और संजीवनी वटी प्रत्येक चौथाई ग्राम मिलाकर प्रातः सायँ दूध से प्रयोग करें।

कायाकल्प के लिए अश्वगंधा

वीना टन्डन, लखनऊ

देश के कई आयुर्वेद शोध संस्थानों में किये गये परीक्षणों से अश्वगंधा की कायाकल्प के सन्दर्भ में सार्थकता सिद्ध हुई है। "राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान जयपुर" में इस पर किये गये एक कार्य में इसे वृद्धावस्था दूर करने में लाभप्रद पाया गया है।

इस औषधि के सेवन से समय से पूर्व आये बुढ़ापे को निश्चित रूप से दूर किया जा सकता है। अगर सामान्य व्यक्ति भी नियमित रूप से इसका सेवन करे तो उसकी वृद्धावस्था को पीछे ढकेला जा सकता है। अभी तक जितने व्यक्तियों में इसका प्रयोग कराया गया है उसमें ८५% व्यक्तियों को लाभ पहुँचा है।

अश्वगंधा के सेवन से रक्तगत हीमोग्लोबिन, सीरमप्रोटीन, सीरम अल्बूमिन एवं सीरम ग्लोबूलीन में वृद्धि एवं सीरम कोलेस्ट्रॉल में कमी देखी गई है। ज्ञातव्य है कि ये रक्तगत परीक्षण वृद्धावस्था को प्रभावित करते हैं।

वृद्धावस्था को दूर करके नवयौवन प्राप्त करने के लिए इस औषधि का सेवन दूध में पकाकर दिन में एक बार किया जाता है। इसके लिए ३० ग्राम अश्वगंधा चूर्ण को २५० मि.ली. दूध में डालकर तत्पश्चात् उसमें १ लीटर पानी मिलाकर आग में उबालते हैं। पानी जल जाने के बाद दूध को ठण्डा करके उसको छानकर प्रयोग किया जाता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अगर मानव समाज निरन्तर अश्वगंधा का सेवन करता रहे तो बहुत कम खर्च में अपने शरीर को स्वस्थ्य रखते हुए बुढ़ापे के लक्षणों से अपने को बचा सकता है।

हमारे प्रमुख वितरक

यदि आपको जीवनीय पत्रिका नियमित मिलने में कुछ दिक्कत हो रही है तो कृपया हमारे कार्यालय से सम्पर्क करके वार्षिक चन्दे से डाक द्वारा सीधे मँगाने की हमारी सेवा का लाभ उठाएँ। वैसे लगभग सभी शहरों के प्रमुख बुक स्टालों पर जीवनीय उपलब्ध है पर हमारे कुछ प्रमुख वितरकों के नाम/पते निम्न हैं :

मै. पुष्पक सेल्स एजेन्सी
२५१, डबल स्टोरी, वेलकम कालोनी, सीलमपुर, जी. टी. रोड, दिल्ली

श्री आर. ए. दुबे एंड सन्स
१०७, बादशाही मंडी, इलाहाबाद

मै. एस. के. न्यूज एजेन्सीस,
घंटाघर, कानपुर

मै. विद्या मंदिर,
सी–४७/१३७, रामपुरा, वाराणसी

बशीर बुक स्टाल
रोडवेज स्टेशन, हरदोई

श्री अशोक कुमार अरोड़ा
रेलवे बुक स्टाल, मुरादाबाद

पाकेट बुक सेंटर
रिलीफ रोड, अहमदाबाद

बड़ौदा बुक सेंटर
बड़ौदा

आर्य वैद्य फार्मेसी
३६६, त्रिची रोड, कोयम्बटूर

गोयल इन्टरप्राइजेज
माटुंगा, बम्बई

नेशनल बुक सेन्टर
महाजन मार्केट, सीताबर्डी, नागपुर

जीवनीय,
ई–III/250, सेक्टर एच,
अलीगंज, लखनऊ – 226 020

राजयक्ष्मा की आहार-चिकित्सा

वैद्य रमेश नानल, मुंबई

राजयक्ष्मा के रोगी की मुख्य समस्या उसके वज़न में निरन्तर कमी आना और इसके साथ ही ऊर्जा शक्ति का ह्रास होना है। इस कारण उसे एक शक्तिदायक भोजन व्यवस्था अपनानी चाहिये और आहार-विहार का विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिए।

टी.बी. के रोगी के लिए निम्न चीजें पथ्य हैं :

- **अनाज** : गेहूँ तथा जौ के आटे की रोटी तथा चावल।
- **सब्ज़ियाँ** : लौकी, तरोई, कटहल, चिचिंडा, हरा चना तथा लाल चने की सब्ज़ियाँ।
- **मांस** : बकरे, कबूतर, हिरण तथा मुर्गे का गोश्त।
- **फल** : आम, केला, अंगूर, सेब।
- **दूध** तथा उससे बनी हुई वस्तुएँ।
- राजयक्ष्मा के रोगी यदि निम्नलिखित आहार का नियमित सेवन करें और साथ ही किसी कुशल वैद्य से अपनी कायचिकित्सा करायें तो शीघ्र इस भयंकर व्याधि से मुक्त हो सकते हैं :
- गोधूम सत्व (एक बड़ा चम्मच), चीनी (१ चाय चम्मच), दूध (१ गिलास) नित्य प्रातः नाश्ते में लेना चाहिये।
- पेठा रोज दिन में एक बार खाना चाहिए।
- ३ खजूर, ३ खुबानी नित्य लेना चाहिये।
- रागी का सत भोजन के साथ लिया जाय।
- द्राक्षासव भोजन के साथ।
- कीमा या भेड़ का सूप या मुर्गे का सूप, या कबूतर का सूप जिसमें अदरक, धनिया, ज़ीरा तथा मुनक्का पड़ा हो लेना चाहिए।
- घर का ताज़ा मक्खन शहद के साथ उचित मात्रा में लेना चाहिये।

चरक के अनुसार

"क्षीरसृताभ्यासं रसायनानाम् अग्र्य।"

अर्थात् शुद्ध घी एवं गाय के दूध का सेवन रसायनों में श्रेष्ठ है।

टी.बी. के मरीज़ इनका सेवन पुष्टि के लिए करें :

- टी.बी. के घातक संक्रमण (जिसमें कफ सूख गया हो) में बकरी का दूध अथवा बकरी के दूध का पनीर, लौंग के साथ उत्तम औषधीय आहार है।
- गौरैया, जंगली पेडुकी, हिरन के बच्चों का गोश्त, मुर्गी, पेडुकी तथा कबूतर के अण्डे किसी भी रूप में ले सकता है।
- चावल की खीर भी टी.बी. के मरीज़ के लिए लाभदायी है।
- उड़द की दाल को बड़ा, खीर या दाल के रूप में लें।
- तिल के तेल या घी की मालिश या दूध में पके चावल से पिण्डस्वेद करायें।

खाँसी और दम फूलने की शिकायत होने पर निम्न आहार व्यवस्था लाभप्रद सिद्ध होती है:

- ३ खजूर, १ बड़ा चम्मच सिंघाड़े का आटा, १० ग्राम गुड़, ३० मुनक्का, १ बड़ा चम्मच अदरक का रस रोज भोजन के साथ लें।
- १ चम्मच सोंठ का चूर्ण, आधा चम्मच काली पीपर, १० ग्राम गुड़। खाना खाने के बाद सुबह शाम लें।
- **भूख न लगने की शिकायत (अरोचक) में** : मिश्री १ चाय चम्मच, इलायची चूर्ण १/४ चाय चम्मच, दालचीनी चूर्ण १/४ चाय चम्मच, शहद १ बड़ा चम्मच। इनको भली-भाँति मिलाकर भोजन से पहले चाटकर लेना चाहिए।
- **टी.बी. के रोगी को पेचिश की शिकायत में** : जामुन का रस १/४ कप, सोंठ चूर्ण १/२ चम्मच, ज़ीरा चूर्ण दिन में ४ से ६ बार दिया जाय।
- पक्वातिसार में मसूर की दाल बहुत लाभदायक है।
- **सरक्तष्ठीवन (थूक में खून की शिकायत) में** : दूध १ गिलास, घी १ बड़ा चम्मच, गोधूम सत्व १ बड़ा चम्मच लें।
- घर का बना मक्खन, मिश्री के साथ दोनों वक्त के भोजन के साथ लें।
- दिन भर में कुल ३० मुनक्के चुभला कर लें।

आयुर्वेदीय वैद्य के लक्षण

वैद्य टी.शेषगिरि राव, विजयवाड़ा

यः आयुर्वेदीयानां अधिष्ठान तत्वानां अधीति बोधा चरण प्रचारणपटुः ।

आयुर्वेद के तत्वों को भली-भाँति जानकर तदनुसार आचरण और प्रचार करने में दक्ष व्यक्ति।

यः आयुर्वेदीय शास्त्रीय चिकित्सायां अप्रकम्प्य विश्वासवान्, दोषधातुमलानां साधुत्वे निस्सन्दिग्धः च ।

आयुर्वेद की चिकित्सा-पद्धति पर अडिग विश्वास रखनेवाला, दोष-धातु-मल सिद्धान्त पर निःशंक व्यक्ति।

यः आयुर्वेद चिकित्सासाध्यान् सर्वान् व्याधीन् आयुर्वेदशास्त्ररीत्या

आयुर्वेदीयैः एव औषधैः सोत्सुकं चिकित्सन् जनतां

आयुर्वेदचिकित्साभिमुखीं तदभिवृद्धयुन्मुखींच कर्तु प्रभवति ।।

आयुर्वेद की चिकित्सा द्वारा साध्य सभी रोगों की आयुर्वेद में वर्णित औषधि-योजना द्वारा चिकित्सा कर जनता को आयुर्वेद चिकित्सा की ओर आकृष्ट करने में समर्थ व्यक्ति।

यः रहसि प्रकाशे वा प्रवचनैः आयुर्वेदशास्त्रं न कदापि खण्डयति अवमन्ति वा ।।

कभी भी आयुर्वेद के सिद्धान्तों का अवमान या खण्डन न करनेवाला व्यक्ति ।

यः आत्मानं "वैद्य" इति आख्यन् प्रमोदते ।।

जिसे "वैद्य" कहलाने में खुशी होती है।

आयुर्वेद ज्ञाता वैज्ञानिक के लक्षण

स एव आयुर्वेदशास्त्रविज्ञानी यः न केवलं आयुर्वेदवैद्यगुणलक्षणयुक्तः ।

किन्तु अधोनिर्छिष्टविशिष्टगुणलक्षणयुक्तः च भवेत् ।

आयुर्वेद का ज्ञाता वही है जिसमें आयुर्वेद वैद्य के लक्षणों के साथ ही निम्नलिखित लक्षण भी हों :

आयुर्वेदशास्त्रविज्ञानिना परीक्षणीयतया स्वीकृतानि कार्याणि आयुर्वेदीयदोषधातुमलाधिष्ठानबाह्यानि मा भवेयुः ।

प्रयोग हेतु स्वीकृत कार्यों में आयुर्वेद के दोष-धातु-मल सिद्धान्त से बाह्य कोई परीक्षण न करे।

परीक्षणाध्ययनफलं च यस्यकस्यापि आयुर्वेदीयसिद्धान्तस्य सत्यापकं निर्णायकं परिचायकं वा भवेत् ।।

प्रयोग का परिणाम आयुर्वेद के किसी सिद्धान्त का ही समर्थन, परिचय अथवा निर्णय करनेवाला हो।

आयुर्वेदशास्त्रविज्ञानीबुभूषुः स्वीय कालशक्तिधनानि यथाशक्ति आयुर्वेदशास्त्राध्ययनाय तदभिवृद्धायर्थं च उपयोक्तुं सन्नद्धो भवेत् ।।

अपना समय, शक्ति, धन सब कुछ आयुर्वेद के अध्ययन के संवर्द्धन हेतु अर्पित करे।

सः आयुर्वेदीयेषु शास्त्रीयप्रवर्तनेषु मनोवाक्कायैः आत्मनः सहयोगं दातुं क्षमः भवेत् ।।

आयुर्वेद शास्त्र के प्रचार-प्रसार हेतु मन-वचन-कर्म से सहयोग करे।

वैद्य टी.शेषगिरि राव विजयवाड़ा के जाने-माने वैद्य हैं जो आधुनिक युग में भी प्राचीन आयुर्वेदीय चिकित्सा का ही अभ्यास करते हैं और रोगी का आयुर्वेदोक्त परीक्षण ही करते हैं। ये उन इने-गिने लोगों में अन्यतम हैं, जो ऐलोपैथी के उत्कर्षकाल में भी आयुर्वेद की ज्योति को मन्द होने नहीं दे रहे हैं। इन्होंने आयुर्वेदीय वैद्य तथा आयुर्वेद-विज्ञानी की परिभाषा संस्कृत के सूत्रों द्वारा की है। कहने की आवश्यकता नहीं कि सूत्रकार का जीवन इन कसौटियों पर खरा उतरा है। **(सम्पादक)**

अम्लपित्त की आहार चिकित्सा

वैद्य र.म. नानल, मुंबई

सामान्यतः पित्त कटु अधिक और अम्ल कम होता है। परन्तु इस रोग में पित्त का अम्लगुण बढ़ जाता है जिससे रोगी को जलन, खट्टी डकार, अपचन आदि लक्षण होते हैं। यह रोग प्रायः मध्यम वय और शरद ऋतु में होता है। यह अति गरम और बहुत खट्टे पदार्थों के सेवन, शराब के अतिसेवन, अजीर्ण की स्थिति में भोजन कर लेने, अभिष्यन्दि तथा पिष्टान्नों के अधिक सेवन आदि कारणों से होता है। इस रोग में निम्न पदार्थ **पथ्य** हैं :

अनाज : गेहूँ, जौ, ज्वार, बाजरा, रागी, पुराना चावल।

सागभाजी : लौकी, चिचिंडा, पत्ता गोभी, भिण्डी, तरोई, केले के फूल।

दाल : चना, मूँग और अंकुरित दाल या पतली दाल।

आमिष : बकरे का मांस।

दुग्धवर्ग : दूध, घी और मक्खन।

सलाद : ककड़ी, खीरा, धनिया, कच्ची हलदी।

अन्य : शहद, सोंठ धनिये के बीज, जीरा, सौंफ, जायफल, नारियल।

अपथ्य

अनाज : नया अनाज।

सागभाजी : मेथी, सहिजन, बैंगन, फूलगोभी, तिनपतिया, चूका।

दाल : अरहर, उड़द, कुलथी।

आमिष : मछली, कबूतर, सूकर मांस, चिकन।

फल : सन्तरा, ताड़, नींबू, खट्टे फल।

दूध वर्ग : दही, मट्ठा (खट्टा)।

सलाद : टमाटर, मूली, लहसुन, अदरक।

अन्य : लाल तली चीजें, दालचीनी, लौंग, इलायची, तेज़ नमकीन पदार्थ। बासी खाद्य, अधिक पानी पीना, तिल, मद्य।

विशिष्ट आहार चिकित्सा

पेट, सीने और गले में जलन होने पर

- दिन में एक बार आठ मुनक्कों के साथ एक कप दूध खाली पेट लें।
- हर दो घण्टे पर ५ या ६ मुनक्के चबाएँ और इस प्रकार दिन भर में ३०–३५ मुनक्कों का सेवन करें।
- खाली पेट गन्ने का रस पीकर उल्टी करें।

कब्ज़

- सात दिनों तक रात में गरम पानी के साथ आठ मुनक्के और तीन अंजीर लें।
- हर दिन भोजन के साथ २०० ग्राम लौकी लें।
- दूध का सेवन अधिक करें। उत्तम तो यह होगा कि दूध ही लें और उसके अतिरिक्त कुछ भी न लें।
- खाना खाते समय सबसे पहले दूध से बनी सिंघाड़े की खीर लें।
- आँवले का मुरब्बा भोजन के साथ लें।

अतिशय भूख

- नारियल की मिठाइयाँ, लड्डू, बर्फी आदि।
- पेठा।
- बेसन के लड्डू।
- खीर।
- धान का लावा।

सिरदर्द

- खाली पेट आधा चम्मच लौकी का रस एक चम्मच शहद के साथ लें।
- भोजन के समय सबसे पहले धनिया, ज़ीरा और घी के संयोग से निर्मित लौकी अथवा करमकल्ले का सूप लें।
- प्रतिदिन प्रातः खाली पेट आधा चम्मच जीरा चूर्ण तथा एक चम्मच चीनी के साथ करमकल्ले का रस लें।
- दिन में दो–तीन बार नाक में घी की चन्द बूँदें टपकायें।
- हर दिन सिर पर शुद्ध नारियल का तेल लगायें।

हथेली, तलवे और आँखों में जलन

- हर दिन लगभग ४० से ६० ग्राम तक घी और लगभग एक लीटर दूध का सेवन करें।
- दोपहर बाद खजूर को पानी में मसलकर, छानकर शर्बत की तरह पियें।
- जलन वाले अंगों पर ककड़ी का कल्क लगायें।
- भोजन में खजूर, मुनक्के की चटनी लें।

● रात में सोने से पूर्व तलवों में घी की हल्की मालिश से आँखों को तरावट मिलती है और तलवों की जलन भी कम होती है।

● आँखों में जलन हो तो आँखों में दूध या घी टपकायें अथवा ककड़ी, तरोई या खरबूज़े का गूदा लगायें।

● पेशाब में जलन की स्थिति में धनिये के बीज का काढ़ा, तरबूज, ककड़ी या गन्ने का रस, गुड़ या चीनी के साथ दूध उपयोगी है।

● एक बड़ा चम्मच धनिये के बीजों को तीन कप पानी के साथ उबालें। जब तीन-चौथाई कप पानी शेष रह जाए तो छानकर पियें। दिन में चार बार इसी प्रकार ताज़ा काढ़ा बनाकर लें।

● बगैर अदरक और नींबू के गन्ने का रस एक-एक गिलास दिन में चार बार लें।

● एक-एक गिलास तरबूज़ का रस दिन में चार बार लें।

● एक-एक गिलास दूध चीनी के साथ दिन में दो बार लें।

● रात में १० ग्राम गुड़ के साथ एक गिलास दूध लें।

● दोपहर के भोजन के साथ एक गिलास ककड़ी का रस लें।

पेटदर्द

यदि तीव्र पेटदर्द हो और रोगी को अल्सर भी हो तो चिकित्सक की सलाह लें। यदि सामान्य दर्द हो तो निम्न उपायों में से किसी एक का प्रयोग करें :

● दूध लेना और उसके अतिरिक्त कुछ न लेना।

● दो केले एक बड़े चम्मच घी के साथ लें।

● १० मुनक्के और ३ अंजीर दिन में तीन-चार बार खायें।

● एक बड़ा चम्मच घर में बना शुद्ध मक्खन एक छोटे चम्मच शहद के साथ दिन में चार बार लें।

● एक गिलास बीज रहित अंगूर का रस एक बड़े चम्मच मिश्री के चूर्ण के साथ दिन में तीन-चार बार लें।

● गेहूँ के आटे के फुलके मूँग की दाल और लौकी की सब्जी के साथ भोजन में लें। और कुछ खाने में न लें।

● दूध-रोटी खायें।

छपते-छपते

दीपावली की काली रात को दिल्ली और उसके आस-पास की झुग्गी-झोपड़ियों में रहने वाले लगभग दो सौ लोगों को कर्पूरासव के नाम से एक आयुर्वेदिक दवा का लेबल लगी जहरीली शराब पीने से अपनी जान से हाथ धोना पड़ा। जहाँ लगभग ४४ व्यक्ति अंधे हो गये हैं लगभग १०० लोगों का इलाज अभी जारी है। हो सकता है कि पुलिस को बिना सूचित किए दफनाए गए लोगों को जोड़कर यह संख्या और बढ़ जाए।

इस भयानक त्रासदी के लिए जिम्मेदार कंपनी का लाइसेंस १९८८ में निरस्त हो चुका था, पर उसे विथैली स्पिरिट की सप्लाई किस प्रकार जारी रही? अखबारों में प्राप्त सूचनाओं के आधार पर यह पता चलता है कि कंपनी द्वारा निर्मित दवा में अल्कोहल का प्रतिशत आवश्यकता से कहीं अधिक था और उसमें संभवतः आयुर्वेदिक दवा के लिए आवश्यक कर्पूर था ही नहीं। ऐसे संकेत भी मिले हैं कि उसी बैच नम्बर की अलग-अलग जगहों से प्राप्त शीशियों पर न केवल अलग-अलग रंग के लेबल लगे थे, वरन् उनके अन्दर के द्रव्य में अल्कोहल की मात्रा भी अलग-अलग थी तथा किसी में मिथाइल अल्कोहल था तो दूसरी में नहीं। ऐसी अनेक अनियमितताओं के बावजूद आयुर्वेदिक दवाओं के नाम पर जहरीली शराब बेचने का धंधा किस प्रकार चलता रहता है?

इन समस्याओं के मूल में जहाँ एक ओर भ्रष्ट अधिकारी और कर्मचारी हैं, या जल्दी से खूब पैसा कमाने की लालसा वाले उद्योगपति या व्यापारी हैं, वहीं दूसरी ओर आयुर्वेदिक दवाओं के मानकीकरण से परे भागने की हमारी प्रवृत्ति भी कुछ हद तक तो उत्तरदायी है ही। इसलिये आज आवश्यकता है कि जहाँ इस भ्रष्ट तन्त्र के विरुद्ध कार्यवाही के पूरे प्रयास हों, वहीं देशी चिकित्सा पद्धतियों के विशेषज्ञों को चाहिये कि इन दवाओं के मानकीकरण के प्रयासों में न सिर्फ तेजी लाई जाए वरन् औषधि निर्माण की प्रक्रिया में इसके प्रयोग का भी विशेष प्रयास किया जाए। नहीं तो ऐसे कांडों की आड़ में देशी चिकित्सा पद्धतियों पर प्रहार भी नाहक बढ़ते रहेंगे।

सम्पादक

सौन्दर्य प्रसाधन एवं कस्तूरी

वैद्य मायाराम उनियाल, रानीखेत

कस्तूरी कुण्डलि बसै, मृग ढूंढ़े बन मांहि।

ऐसे घट–घट राम हैं, दुनिया देखत नाहिं।। कबीरदास

संस्कृत साहित्य में कस्तूरी का उपयोग दौर्गन्ध्यहर, वर्ण्य, सुगन्धित व सौन्दर्य प्रसाधन के रूप में वर्णित है। आयुर्वेद संहिता ग्रन्थों में भी कस्तूरी का उपयोग बाजीकरण (सेक्सटॉनिक) वात–कफशामक, मस्तिष्क नाड़ी बल्य, हृद्य, बल्य, शीतांगसन्निपात, कम्पवात एवं उन्माद, अपस्मार में किया जाता है। यह कस्तूरी नर कस्तूरा मृग के मुष्कप्रदेश में स्थित नाभि (नाफा) से प्राप्त की जाती है। नर कस्तूरा मृग से कस्तूरी प्राप्त करने के लिये उसका अवैध रूप से शिकार किया जाता है, जिसके कारण दिन–प्रति–दिन हिमालय में इन मृगों की संख्या घटती जा रही है। इन दुर्लभ मृगों के अनैतिक आखेट के कारण प्राकृतिक स्रोतों के दोहन के साथ–साथ पर्यावरण पर भी असर पड़ता जा रहा है। अब भारत सरकार के केन्द्रीय आयुर्वेद एवं सिद्ध अनुसन्धान परिषद नई दिल्ली ने कस्तूरा मृगों के प्रजनन एवं कस्तूरा मृग को बिना मारे कस्तूरी प्राप्त करने के तरीकों का पता लगाने हेतु एक योजना तैयार की है। इस योजना के तहत वर्ष १९७७ से रानीखेत संयुक्त अनुसंधानीय केन्द्र के अधीनस्थ जिला – अल्मोड़ा महरूड़ी (धरमघर) में २२००० मीटर की उंचाई पर कस्तूरा मृग प्रजनन फार्म कार्यरत है। इस समय फार्म में लगभग नर एवं मादा मृगों की संख्या ३० के आस–पास है। केन्द्र में इन मृगों को पालतू पशुओं की तरह रखने के उपायों के साथ–साथ उनके रहन–सहन, स्वभाव, प्रजनन, चारा आदि विषयों का भी गहन अध्ययन होता है। मृगों को मारे बिना कस्तूरी प्राप्त करने के नवीन तकनीकी उपायों का भी पता लगाया जा रहा है। आशा है कि निकट भविष्य में कारगर परिणाम मिल सकेंगे। भारत के अलावा चीन भी कस्तूरा प्रजनन केन्द्रों की स्थापना के साथ–साथ कस्तूरी प्राप्त करने की नवीन खोजों में अग्रसर है। भारत में इस समय मुख्य रूप से तीन कस्तूरा प्रजनन केन्द्र कार्यरत हैं।

– हिमाचल प्रदेश में कूफरी में कस्तूरा फार्म

– चमोली गढ़वाल में कांचलाखर्क में कस्तूरा फार्म

अल्मोड़ा जिले में महरूड़ी (धरमघर) केन्द्र में सी.सी.आर.एस. का कस्तूरा प्रजनन फार्म।

महरूड़ी कस्तूरा फार्म उत्तर प्रदेश के पर्यटक विभाग के मानचित्र में अंकित है। देहली से महरूड़ी कस्तूरा फार्म की दूरी लगभग ५१० किलोमीटर है। मृगों की सुरक्षा दृष्टि से यह स्थान सुरक्षित घोषित है। फार्म को देखने के लिये निदेशक केन्द्रीय आयुर्वेद एवं सिद्ध अनुसन्धान परिषद, नई दिल्ली से अनुमति लेनी पड़ती है।

कस्तूरा मृग : यह हिरण अत्यन्त सशंकित जाति का वन्य प्राणी है जो कि मध्य हिमालय में उत्तराखण्ड हिमालय, काश्मीर, आसाम, नैपाल, भूटान, तिब्बत, चीन, तथा रूस आदि देशों के एलपाइन क्षेत्र में दस हजार फीट की ऊँचाई से लेकर चौदह हजार फीट की उंचाई तक पाया जाता है। मृग सुन्दर, मनोहर होता है। यह लगभग २० इंच ऊँचा, बाल घने, लम्बे, धूसर वर्ण के व धब्बेदार होते हैं। पूँछ बहुत छोटी, बालों से ढकी रहती है। पिछले पैर आगे के पैरों की अपेक्षा अधिक लम्बे एवं खुर नुकीले होते हैं। सींग रहित एवं कान खड़े होते हैं। मुख के निचले जबड़े से २ से ३ इंच लम्बे नुकीले दाँत बाहर को निकले रहते हैं। मादा मृग के दाँत बाहर को नहीं होते हैं। लिंगेन्द्रिय मणि को आवृत करने वाली त्वचा के प्रवर्धन से एक थैलीनुमा जिसे नाफा कहते हैं, होती है, उसमें विशेष प्रकार की सुगन्ध लिये हुए तरल व रवेदार पदार्थ मृगमद का नाम ही कस्तूरी है। यह नाफा शिश्नावरण एवं नाभि के मध्य में स्थित होता है, जो कि छिद्रयुक्त एवं सघन धूसरवर्ण के बालों से ढका रहता है। हिरण की युवावस्था के मदकाल में यह सुगन्धित मदस्राव बनना प्रारम्भ हो जाता है। स्वस्थ एवं कामातुर मृग से २० से ३० ग्राम तक कस्तूरी प्राप्त की जा सकती है। बाल, वृद्ध, क्षीण एवं अस्वस्थ मृग से कम मात्रा में अल्पगन्धवाली कस्तूरी प्राप्त होती है। यथा –

मृगनाभी मृगमदो वेध्यमुख्यं मृगाण्डजम् ।

कामातुरे च तरुणी कस्तूरी बहुलपरिमला भवति।। **अ.हु.कोष।।**

कस्तूरी की पहचान : नैपाली कस्तूरी नीलवर्ण की, कामरूपीय (आसाम) कस्तूरी कृष्णाभ वर्ण की सर्वश्रेष्ठ होती है। काश्मीर से मिलने वाली कस्तूरी कम गुणों वाली मानी जाती है। असली कस्तूरी रक्ताभ, श्याम वर्ण की पिंगलाभ, केवड़े के समान तीक्ष्ण,

शेष पृष्ठ ४६ पर

जरा नाशकारी – रसायन

डॉ. पी. यादैया, अकोला

वृद्धावस्था और व्याधि को दूर करनेवाला औषध रसायन कहा जाता है। रसायन द्रव्य सेवन करने से मनुष्य दीर्घायु, स्मरण–शक्ति, धारण–शक्ति, आरोग्य, तरुणावस्था, शरीर की कांति, शरीर वर्ण, स्वर, इन्द्रिय और देह में उत्तम बल इत्यादि प्राप्त करता है।

रस, रक्त, मांसादि धातुओं के बल में वृद्धि होती हैं। वृद्धावस्था में शरीर का धातु क्षय होकर, स्मरण–शक्ति, धारणा–शक्ति कम हो जाती है। शरीरावयव शिथिल होकर आयु का क्षय होता रहता है। रसायन औषध सेवन करने से जैसे युवक में प्रभा, वर्ण, काम करने की क्षमता रहती है, ठीक वैसे ही वृद्ध व्यक्ति में भी पाई जाने लगे तो यह कहा जा सकता है कि इसकी वृद्धावस्था समाप्त हो गई है।

रसायन औषधियों का आयुर्वेद में बहुत उल्लेख किया गया है और उपभोग करने की विधि भी अलग–अलग है। जैसे कुटीप्रावेशिक और वातातपिक।

कुटीप्रावेशिक रसायन : इसके लिये विशिष्ट प्रकार का त्रिगर्भ कुटी निर्माण करके रसायन इच्छा वाले मनुष्य को वमनादि शोधण द्वारा दोषों की शुद्धि करने के बाद इस कुटी में प्रवेश कराकर रसायन प्रयोग करना चाहिये।

वातातपिक रसायन : साधारण नियमों का पालन करते हुए इस रसायन चिकित्सा को ले सकते हैं। शरीर शुद्ध करने के बाद इस रसायन को देना चाहिये।

रसायन औषध : आमलकी, यष्टि मधु, शिलाजीत, पिप्पली, हरीतकी इत्यादि रसायन औषधियाँ प्रत्येक मनुष्य ले सकता है। भल्लातकी रसायन कफ, वात प्रकृति वालों को शीत ऋतु में ही उपयोग करना चाहिये।

इन रसायन औषधियों के अलावा आचार्य चरक ने एक अन्य रसायन का उल्लेख किया है। इस रसायन में औषधि प्रयोग करने की आवश्यकता नहीं है। इस रसायन का प्रयोग प्रत्येक मनुष्य को करना आवश्यक है और बिना मूल्य या किसी चिकित्सक की सलाह के बगैर यह रसायन ले सकते हैं। इस रसायन का आचार रसायन के नाम से उल्लेख किया गया है। हो सकता है कि इस आचार रसायन के कारण ही हमारे पूर्वज दीर्घायु, स्वस्थ, बुद्धिमान और स्मरण शक्ति से मृत्युपर्यंत सम्पन्न रहते थे।

आचार रसायन : क्रोध, हिंसा, क्रूरता से दूर रहने, अहंकार न करने से सभी प्रकार के मानसिक व्याधियों से मुक्त रह सकते हैं।

भोजन देश काल, मात्रा के अनुसार और युक्ति से करना चाहिये। जो व्यक्ति भोजन के नियमों का पालन करते हैं वे सदा स्वस्थ रहते हैं। भोजन में दूध, घी का अधिक सेवन तथा मद्य सेवन नहीं करना चाहिये।

सदा सत्य बोलने, शांति, पवित्रता, सदा मीठा बोलने, दूसरों पर दया करने, उत्तम आचार–विचार रखने, वृद्धों की सेवा करने आदि से मन शांत रहता है। मैथुन में संयम रखना, उचित समय पर निद्रा करना और ब्राह्म मुहूर्त में उठना भी लाभकारी होता है।

इस प्रकार आहार, विहार, विचारों का पालन करने वाले मनुष्य रसायन का सेवन यदि न भी करें तो भी रसायन के सभी गुण उन्हें प्राप्त होते हैं।

पृष्ठ ४३ का शेष

कस्तूरी...

सुगन्धयुक्त रवेदार होती है। इसमें उग्रसुगन्धित तेल मशकोन पाया जाता है। वर्तमान में रासायनिक विधि से नकली कस्तूरी तैयार की जाती है। जिसकी सुगन्ध प्राकृतिक कस्तूरी से भिन्न एवं गुणहीन होती है। यथा –

या गन्धं केतकीनां वहति भृशतरं वर्णतः पिंगलाभा
स्वादे तिक्ता कटूष्णा, लघु परितुलिता मर्दिता चिक्कणा स्यात् ।
दग्धा नो याति भस्मं, चिमि चिमि कुरुते चर्मगन्धा हुताशे
सा शुद्धा शोभनीया राजयोग्या प्रदिष्टा ।। कै.नि.

आयुर्वेद में कस्तूरी से निर्मित औषध योग्य कस्तूरी भैरवरस, चतुर्भुजरस, मृगमदासव, हिंगुकर्पूरवटी आदि कतिपय योगों का उपयोग सन्निपातज्वर, हृदयविकार, हृदयावसाद, पक्षाघात, वातवह संस्थान विकार तथा विशेष रूप से ध्वजभंग (लिंगेन्द्रियदोष) शीघ्र पतन में वाजीकरण के प्रयोग में किया जाता है। अतः कस्तूरी एक कामोद्दीपक दौर्गन्ध्यहर, उग्रसुगन्धियुक्त व सौन्दर्य प्रसाधन में उपयोगी द्रव्य माना गया है। विदेशी कस्तूरी सौन्दर्य प्रसाधन सामग्री हेतु अधिक लोकप्रिय है।

अश्वत्थ–पीपल

हकीम अज़ीज़ निज़ामी, सीतापुर

पीपल भारत तथा बौद्ध देशों में पूजनीय वृक्ष है। भारत में तो इसे देवताओं का स्वरूप ही माना गया है। पिप्पल, बोधिद्रुम, फाइकस रिलीजिओसा आदि नामों से यह वृक्ष विख्यात है। इसके सभी अंग औषधीय गुणों से परिपूर्ण हैं।

गुण

पीपल पित्त तथा रक्तगत विकार, दाह, योनि रोग, हृदय की दुर्बलता, तरह–तरह के तीव्र तथा मन्द विष, धातु क्षय, अरुचि, वमन, मूर्च्छा, वातरक्त, वीर्यहीनता तथा मूत्र दोष नाशक है। विषजन्य मन्द ज्वर तथा इन्द्रिय वैकल्य में रसायन रूप में प्रयोग किया जाता है।

अनुभूत योग

योनि दोष : योनि मार्ग से होने वाला विविध रंग का दुर्गन्धित स्राव, खुजली, दाने, जलन में इसकी छाल का काढ़ा बनाकर दिन में दो बार पिचकारी से योनि धोने तथा इसी छाल रस में पकाये गये तेल की बत्ती योनि के भीतर रखने से लाभ होता है।

वात रक्त : इस रोग में हाथ–पाँव अथवा शरीर की अन्य सन्धियों में सूजन–पीड़ा हो जाती है। कभी–कभी त्वचा के फट जाने पर चूने की तरह का पदार्थ (स्राव) निकलने लगता है। ऐसी स्थिति में अश्वत्थ की छाल का काढ़ा तीन मास तक नियमित रूप से सेवन कराने तथा पथ्य में फलाहार अथवा गाय या बकरी का दूध देने से ७५ प्रतिशत रोगियों को लाभ होते देखा गया है।

वीर्य का पतलापन : इस रोग में पीपल

अब समझ में आया कि लोग पीपल की पूजा क्यों करते हैं।

के कोमल पत्तों तथा पके हुए बीजों और पतली जड़ों का चूर्ण मिश्री तथा दूध के साथ प्रातः ६ माशा सेवन करने से लाभ होता है। इस अवधि में ब्रह्मचर्य रखना आवश्यक है।

पित्त प्रमेह : इस रोग में मूत्र में जलन, पीलापन, मूत्र मार्ग में लाली, मूत्र राशि कम होना आदि लक्षण हैं। पीपल की छाल का काढ़ा दिन में तीन बार देने तथा भोजन में गर्म चीजें न देने से बहुत शीघ्र लाभ होता है।

प्यास, ज्वर तथा वमन : पीपल की सूखी छाल का अंगार बनाकर पानी में बुझायें। कई बार बुझाकर पानी छान लें, उसी पानी को पिलाने से उपरोक्त कष्टों में लाभ होता है।

मुखपाक : बच्चों के मुखपाक में पीपल की छाल का रस, गाय के घी या तिल्ली के तेल में बराबर–बराबर मिलाकर पका लें। तेल रहने पर छान लें। उसी तेल को लगावें। यह तेल घावों पर लगाने पर लाभ करता है।

कान दर्द : कोमल पत्तों को सेक कर, निचोड़कर रस निकालकर 'कान में टपकाने से कान दर्द एवं कर्णनाद (कान में आवाज़ होना) में लाभ होता है।

प्रतिदिन नियमानुसार पीपल के पके बीजों को साफ करके प्रातः सायं खाने या उसका रस निकालकर पीने से पैत्तिक संग्रहणी, अम्लपित्त में लाभ होता है। स्वास्थ्य भी उत्तम हो जाता है।

विशेष : पीपल योगों के प्रयोग की अवधि में कभी–कभी विबन्ध (कब्ज़) होता देखा गया है। ऐसा होने पर दो–चार दिन प्रयोग बन्द कर दें या साथ–साथ दूध, मक्खन, घी आदि लेते रहें तो बाधा नहीं आती है।

मधु संचय

विषहर वृक्ष : गुलतुर्रा

इस वनस्पति में बिच्छू का विष उतारने की अद्‌भुत शक्ति पाई गई है। बिच्छू के ज़हर पर यह औषधि हजारों रोगियों पर प्रयुक्त किये जाने पर विजयी प्रमाणित हुई है। कुल ८०४ मनुष्यों के ऊपर भिन्न-भिन्न जातियों के बिच्छुओं के ज़हर पर इसको आज़माया गया और रिपोर्ट से ज्ञात हुआ कि ८०४ रोगियों में से ७९३ रोगी रोग-मुक्त हुए।

गुलतुर्रा के वृक्ष १५ से २० फीट तक ऊँचे होते हैं। तना भूरा, चिकना, तेजस्वी होता है। इसकी दो जातियाँ होती है। यह शीतवीर्य और स्निग्ध होता है तथा ग्रन्थि, नाड़ी व्रण, वात व्याधि का शामक, त्रिदोष-हर और ज्वरोपशामक भी है।

इस वृक्ष की जड़ के दो-दो, तीन-तीन रंग के टुकड़े काटकर उनको धोकर साफ करके उपयोग में लिया जाता है। जड़ सूख जाने पर आशानुकूल फायदा नहीं करती है। इसलिए जहाँ तक हो सके ताजा जड़ का ही प्रयोग करना चाहिये।

दैनिक जागरण, १६ अक्टूबर, १९९१

आलू के सेवन से मत घबरायें

प्रायः जब हम हृदय रोग, हाइ ब्लड प्रेशर या अधिक भार के कारण हल्का आहार अपनाने का प्रयास करते हैं तो सबसे पहले अपने भोजन को आलू रहित बनाने का प्रयास करते हैं। ऐसा विचार गलत है। आलू हानिकारक या उपेक्षित आहार न होकर स्वास्थ्यवर्द्धक आहार है। प्रश्न यह है कि इसका उत्तम उपयोग कैसे किया जाय। भूने हुए आलू सबसे स्वास्थ्यवर्द्धक होते हैं फिर उबले हुए आलू का स्थान आता है।

यह मानना सही है कि आलू में कैलोरीज़ होती तो अवश्य है लेकिन वे क्षति पहुँचाने वाली नहीं होती है। लगभग १०० ग्राम के बड़े आलू में ९७ कैलोरीज़ होती है। ये कैलोरीज़ कुछ जटिल कार्बोहाइड्रेट्स विशेषतः स्टार्च के कारण होती हैं। इसके अतिरिक्त अन्य कार्बोहाइड्रेट्स युक्त आहारों की तरह आलू में भी प्रोटीन बचाये रखने की योग्यता होती है। आलू बच्चों को कैलोरीज़ प्रदान कर ऊर्जा देता है जिससे उसके शारीरिक विकास के लिए आवश्यक प्रोटीन प्राप्त होते हैं।

वृद्ध लोग जो अनाज का उपयोग पाचन समस्या अथवा कमज़ोर दाँतों के कारण नहीं कर पाते, वे आलू को भोजन के पूरक और विकल्प के रूप में ग्रहण कर सकते हैं। यदि हर रोज़ अनिवार्य कैलोरी को नज़रअन्दाज़ न करें तो हृदय रोग और हाई ब्लड प्रेशर के मरीज़ भी आलू का सेवन कर सकते हैं लेकिन मधुमेह के मरीज़ों को इसका सेवन नहीं करना चाहिये।

सन्डे मेल अगस्त ४, १९९१

पोलियो और एक्युप्रेशर थेरेपी

आधुनिक विज्ञान के अनुसार पोलियो की बीमारी "वायरस" (जीवाणु) के कारण होती है। शरीर की क्रियाएँ मस्तिष्क में स्थित विशिष्ट प्रकार के ज्ञानतन्तुओं के ज़रिये होती है। वायरस के कारण उनको नुकसान पहुँचने से कमर के हिस्से में ज्ञानतन्तु का केन्द्र भी प्रभावित होता है और परिणामस्वरूप व्यक्ति पैरों को हिलाने की अपनी शक्ति खो बैठता है। एलोपैथी में इस बीमारी से बचने के लिए दवा ढूँढ निकाली गई है किन्तु दुर्भाग्यवश पोलियो की बीमारी हो ही गई हो तो क्या किया जाये? ऐसी परिस्थिति में एक्युप्रेशर पद्धति काफी हद तक कामयाब साबित हुई है - खासकर कम उम्र के बच्चों के लिये।

एक्युप्रेशर थेरेपी में शरीर पर निश्चित बिन्दुओं पर मध्यम मात्रा में अपने हाथ के अंगूठे से या अंगुलियों द्वारा पाँच या सात सेकेन्ड तक दबाव डाला जाता है, इस प्रक्रिया को निर्धारित बिन्दुओं पर एक बार के इलाज में तीन या चार बार दोहराना चाहिये।

आरोग्य संजीवनी, अंक ६, १९९१

पत्र-पत्रिकाओं से

लहसुन, प्याज़ : कैंसर रोधी

टैक्सास एंडरसन अस्पताल और ट्यूगर संस्थान के माइकेल जावरे गोविक ने अपने एक लेख में बताया है कि सन्तुलित भोजन का अभाव कैंसर का प्रमुख कारण है। चूंकि प्याज़ और लहसुन में आरगेनिक सल्फाइड पाया जाता है इसलिये इनमें कैंसर रोकने की क्षमता है।

लविन्द्र टाइम्स, अगस्त १९९१

अधिकार और धूम्रपान

ब्रिटिश मेडिकल एसोसिएशन द्वारा २४ नवम्बर १९८९ को "काम पर धूम्रपान" करने पर एक विचार-गोष्ठी का आयोजन किया गया। शोध से पता चला है कि ४३ प्रतिशत अप्रशिक्षित पुरुष और ३३ प्रतिशत अप्रशिक्षित महिलायें धूम्रपान करती हैं। इस विचार-गोष्ठी ने कई प्रमाण प्रस्तुत किये हैं कि अप्रशिक्षित कार्यकर्ता (मज़दूर) काम करते समय धूम्रपान करते हैं। इस विचार-गोष्ठी में कुछ ट्रेड यूनियनों के प्रतिनिधि भी थे जिन्होंने यह तर्क पेश किया कि कुछ ग्रुपों के कार्यकर्ताओं को काम पर धूम्रपान करने का अधिकार है।

स्वास्थ्य और जीवन, अक्टूबर १९९१

मधुमेह की चिकित्सा "मेथी"

अभी हाल ही में हैदराबाद के "राष्ट्रीय पोषक आहार संस्थान" के वैज्ञानिकों ने अपने अध्ययन से यह पता लगाया है कि मेथीदाना के नियमित प्रयोग से न केवल मधुमेह पर ही नियन्त्रण किया जा सकता है वरन् कोलेस्ट्रॉल की मात्रा को भी घटाया जा सकता है। साथ ही पेशाब में भी ग्लूकोज़ की मात्रा को ६५% तक कम किया जा सकता है।

लविन्द्र टाइम्स, १६ अक्टूबर १९९१

विटामिन "ए" से शिशुओं को जीवनदान

करोड़ों शिशुओं को, जो कुपोषण के शिकार हैं विटामिन "ए" देकर बचाया जा सकता है। एक अध्ययन की रिपोर्ट, जो कि न्यू इंग्लैण्ड जर्नल ऑफ मेडिसिन में प्रकाशित हुई, उसके अनुसार जिन बच्चों को अतिरिक्त विटामिन 'ए' दिया गया उनमें से ४६ प्रतिशत को लाभ हुआ।

लविन्द्र टाइम्स, १६ अक्टूबर १९९१

महिलाओं को थाइराइड रोग ज्यादा

थाइराइड ग्रन्थि प्रत्येक व्यक्ति में उसके गले के पास होती है। जो गले व आवाज़ के साथ-साथ मस्तिष्क को भी प्रभावित करती है। इसके मुख्यतया दो हारमोन्स होते हैं। शरीर की थाइराइड ग्रन्थि में टी-३, टी-४ हारमोन के स्तर घटने और बढ़ने से मनुष्य में इससे सम्बन्धित लक्षण दिखाई पड़ने लगते हैं। एक महत्वपूर्ण शोध के अनुसार इस रोग से ९० प्रतिशत स्त्रियाँ ही प्रभावित होती हैं इस रोग से विशेषकर मध्यवर्गीय एवं उच्च मध्यवर्गीय परिवार ज्यादा ग्रसित हैं।

आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका, मार्च १९९१

मूँगफली के दूध, दही में विटामिन

सैन्ट्रल फूड टैक्नोलॉजिकल रिसर्च इन्स्टीट्यूट में मूँगफली से दूध और दही बनाने की विधि निकाली गई है। इस विधि से बनायी हुई दही में "बी" वर्ग के विटामिनों में से थायामीन, बी.-१, राइबोफ्लेविन, बी.-२ और निकोटिनिक एसिड अच्छी मात्रा में उपस्थित होते हैं। दूध बनाने की क्रिया में मुँगफली को १२० से १३० डिग्री सेन्टीग्रेट पर लगभग १० मिनट तक भूना जाता है और उसके बाद गिरियों की पिट्ठी का पानी के साथ जो मिश्रण बनाया जाता है उसमें से मूँगफली की गंध को निकाल देने के लिए लगभग आधे घंटे तक भाप गुजारी जाती है। इस दूध से दही साधारण घरेलू रीति से तैयार किया गया।

विज्ञान प्रगति, नवम्बर १९९१

पुस्तक समीक्षा

कामला
निदान चिकित्सा

लेखक – *वैद्य रमेश मधुसूदन नानल*
प्रकाशक – *माधवी प्रकाशन, सी/१, मॉर्निंगस्टार, शीतला देवी मन्दिर रास्ता, माहिम, मुंबई ४०००१६*
पृष्ठ – ५६
मूल्य – रु. १८.००
संस्करण – *प्रथम १९९१*

वैद्य रमेश मधुसूदन नानल आयुर्वेद विषयों के प्रख्यात लेखक हैं। वे लब्धप्रतिष्ठ चिकित्सक भी हैं अतः प्रस्तुत पुस्तक में परम्परागत चिकित्सा के साथ ही उनके स्वानुभूत प्रयोग और जनसिद्ध उपचार भी संग्रहीत हैं।

यह छोटी–सी पुस्तक होते हुए भी आयुर्वेद की दृष्टि से "कामला" के रोग के सभी प्रकारों का सविस्तार विवरण देती है। पुस्तक में कामला रोग की उत्पत्ति, कामला के भेद, अन्य रोगों के लक्षण के रूप में उत्पन्न कामला के विवरण, सविस्तार लक्षण दिये गये हैं।

कामला के प्रत्येक भेद के सम्बन्ध में विस्तृत चिकित्सा और औषधि योजना भी दी गई है। लेखक ने कामला के प्रत्येक लक्षण के लिए अलग–अलग औषधियोजना बताई है, परन्तु कामला के रोगी में केवल एक लक्षण ही नहीं होता बल्कि एक साथ अनेक लक्षण होते हैं। सामान्यतया एक साथ जो अनेक लक्षण दिखाई पड़ते हैं, उनके लिए भी यदि औषधि–योजना दी गई होती तो सम्भवतः अधिक उपयोगी होती।

लेखक ने अपने अनुभव के आधार पर कामला के निवारण हेतु तीन औषधियों का यथा– १. कुटकी, २. शरपुंखा तथा ३. गोरोचन का उल्लेख किया है परन्तु गोरोचन के सम्बन्ध में विवरण छपने से छूट गये प्रतीत होते हैं।

पुस्तक सर्वसामान्य जन तथा विद्यार्थियों और वैद्यों के लिए लिखी गई है। परन्तु उसमें जिस शब्दावली का प्रयोग है वह अधिकांश पारिभाषिक है अतः क्लिष्ट है। इस कारण इस पुस्तक से जनसामान्य को पर्याप्त लाभ होने में शंका लगती है।

पुस्तक हिन्दी में है, परन्तु हिन्दी भाषा की दृष्टि से वाक्य विन्यास, शब्द आदि कई स्थानों पर सही नहीं हैं। फिर भी हिन्दी में कामला के सम्बन्ध में जानकारी देने का लेखक का प्रयास प्रशंसनीय है।

कामला के उपचारों में लेखक ने महाराष्ट्र की पारम्परिक चिकित्सा–योजनाओं का भी विवरण दिया है। इनमें उल्लिखित औषधियों पर अधिक शोध और प्रयोग आवश्यक है ताकि इन औषधियों को भी प्रयोग के बाद लाभकारी पाये जाने पर शास्त्रीय रूप प्राप्त हो सके।

एक अनुभव

कृमि रोग चिकित्सा

जय प्रकाश, लखनऊ

पिछले कुछ समय से मैं और मेरे मित्र महोदय कृमि रोग से पीड़ित रह रहे थे। वैद्य जी की सलाह पर उसका सही ढंग से उपचार शुरू कर दिया लेकिन मन में यह जिज्ञासा बनी रही कि इस रोग का सम्भावित कारण क्या हो सकता है? मेरे मित्र महोदय बहुत दुःखी थे क्योंकि वे हर पन्द्रह दिन पर पेट के कीड़े मारने की दवा लिया करते थे। अचानक हम लोगों को किसी कारण से अपना मकान बदलना पड़ गया और उसके बाद से कृमि रोग की पीड़ा समाप्त हो गई।

इसका कारण जानने की इच्छा तो हम संजोये हुए थे ही और एक दिन स्वास्थ्य लाभ प्राप्त करने हेतु टहलते हुए हम लोग अपने पुराने दूध वाले के यहाँ पहुँच गये। वहाँ पर मेरे मित्र ने दूध वाले को बाल्टी में दूध निकालने के बाद नांद से पानी निकालकर मिलाते हुए देख लिया। इसके बाद उनकी समझ में आ गया कि कृमि रोग से बार–बार पीड़ित होने का क्या कारण है।

भूताग्नि

भूताग्नि नाम से ही स्पष्ट है कि यह पंचमहाभूतों से अर्थात् पृथ्वी, जल, वायु, आकाश और तेज से सम्बन्ध रखते हुए भी अग्निस्वरूप है। अग्निस्वरूप होने के कारण इसमें तेजस्तत्व विशिष्ट रूप से रहता है। अतः भूताग्नि आग्नेय होने से उसमें ऊष्मा व्यक्त या अव्यक्त रूप से होना अवश्यंभावी है। ऊष्मा पित्त का ही एक रूप है और उसका निर्माण भौतिक तत्वों से होता है। इस प्रकार भूताग्नि भी रसायनधर्मा विभिन्न सूक्ष्म द्रव्यों का पुंज है।

भूताग्नि चूँकि पंचमहाभूतों में अधिष्ठित है, अतः शरीर में सर्वत्र इसकी उपस्थिति निर्विवाद है। यह पंचमहाभूतों से सम्बन्धित सभी शारीरिक तत्वों में विद्यमान रहती है। साथ ही भूताग्नि आहार द्रव्यों में भी, जो पंचमहाभूतों के मिश्रण होते हैं, अवस्थित होती है। आहार या औषधि द्रव्यों में अधिष्ठित भूताग्नि उनके साथ शरीर में प्रवेश करती है और पाचकाग्नि द्वारा उनका पचन हो जाने पर सक्रिय होती है।

आधुनिक विज्ञान में इन आहार–औषधि द्रव्यों को, जो दीपन, पाचन, तर्पण आदि रासायनिक क्रियाएँ सम्पन्न करते हैं, खाद्योज या विटामिन कहा जाता है।

भूताग्नि सम्पन्न द्रव्यों द्वारा शरीर में दीपन, पाचन, दहन, विच्छेदन, संयोजन, विघटन, संघटन आदि रासायनिक क्रियाएँ सम्पन्न की जाती हैं। भूताग्नि इस प्रकार कोष्ठ, ग्रहणी, यकृत आदि में रासायनिक क्रियाओं के उपरान्त रस, रक्त आदि धातुओं और विविध ग्रन्थियों, कक्षाओं, ज्ञानेन्द्रियों और मस्तिष्क पर अपना प्रभाव डालती है। परन्तु विशेषकर ग्रहणी और यकृत ही भूताग्निकर्म के केन्द्र हैं।

भूताग्नि द्वारा पचन से पाँच भौतिक अन्नरस में गुणों का प्रादुर्भाव होता है–

"यद्यपि भूताग्निना पार्थिवादि द्रव्यं पच्यते
तथापि द्रव्याणां पाकेन एतदेव जननं
मत् विशिष्ट गुण युक्तत्वम्" (चक्रपाणि)

इस प्रकार भूताग्नि पाक से भौतिक द्रव्यों में देह सात्म्यता उत्पन्न होती है और वे शरीर का अंश बनकर शरीर में भार, आर्द्रता, स्निग्धता, ताप, गति, लघुता, आदि गुण उत्पन्न करते हैं। भूताग्नि के पचनोपरान्त अन्नरस देहपोषक हो जाता है।

शब्दकोष

आदिम : प्रारम्भ का, प्रथम।

अन्तःस्रावी : भीतर स्राव करने वाली। शरीर के कई संस्थानों में विभिन्न ग्रन्थियाँ होती हैं जो विभिन्न आवश्यक रसायनों का स्राव करती रहती हैं।

अपाय : हानि।

अभिष्यन्दि : दोष, धातु और मल के स्रोतों में क्लेद (द्रव) उत्पन्न करने वाले।

अभ्यंग : शरीर पर तेल लगाकर मालिश करना।

आमवात : भूख न लगने पर भी विरुद्धाहार या गरिष्ठ भोजन करने से आम (अपक्वाहार) वात से प्रेरित होकर श्लेष्मस्थान में प्रविष्ट होने से होने वाला रोग। इससे स्रोत दूषित होते हैं, दुर्बलता उत्पन्न होती है और भारीपन उत्पन्न होता है। सन्धियों में पीड़ा और सूजन उत्पन्न होती है। शरीर टूटना, प्यास, अरुचि, आलस्य और ज्वर इसके लक्षण हैं।

कम्पवात : वातजन्य रोग का प्रकार, जिसमें हाथ और पैर काँपते रहते हैं।

गण्डमाला : गले के पास गाँठें होना।

गृध्रसी : वात विकार, जिसमें कमर, जाँघों और घुटनों की सन्धियाँ जकड़ जाती हैं।

नस्य : नाक में डालने की दवा।

नासार्ति : नाक में होने वाला कष्ट।

पिष्टान्न : बारीक पिसे हुए आटे, मैदे आदि से बनी हुई वस्तुएँ।

प्रतिश्याय : नाक से पानी, कफ का बहना।

मुखपाक : मुँह के भीतर या ओठों पर छाले, काँटे या घाव।

मूत्रकृच्छ : एक रोग, जिसमें पेशाब होने में कष्ट होता है।

मूत्रल : पेशाब बढ़ाने वाली दवा।

मेध्य : मेधस (बुद्धि) बढ़ाने वाली दवा।

वाजीकर : शुक्रवर्द्धक।

मस्तरामजी

३

कथा : पं० काशीनाथ गोरे
चित्र : सन्दीप सेन

..उसे यह बीमारी क्यों हुई ?
इकलौता होने के कारण वह हठी हो गया है.. उसे दही बहुत पसंद है.
अत्यधिक दही खाते रहने के कारण वह बीमार पड़ गया है!
दही न खाने के लिए उसे मैंने बहुत मनाया.. परन्तु वह जिद पकड़ लेता है..
मैं सभी उपाय कर हार गया हूँ!
..अगर आप उसे समझा दें तो..
जब माँ-बाप उसे समझा नहीं सके तो मैं कैसे समझा पाऊंगा ?
आप ज्ञानी हैं.. आप में अगाध शक्ति है!
आप अपनी अमृत वाणी से उसे यदि समझायेंगे तो मुझे पूरा विश्वास है वह मान जायेगा!
यदि उसकी यह आदत छूट जाय तो सलिल अवश्य ही स्वस्थ हो जायेगा.
मेरे ऊपर इतनी कृपा आप अवश्य करें!
मस्तरामजी की बात सुनकर गुरुजी ध्यानमग्न हो गए.
क्रमशः

विज्ञापन की दरें

	प्रति अंक	छमाही	वार्षिक
पिछला आवरण (रंगीन)	5,000	12,000	20,000
अंदरूनी आवरण (रंगीन)	4,000	10,000	18.000
अंदर के पृष्ठ	2,000	5,000	9,000
अंदर का आधा पृष्ठ	1,000	3,000	5,000

आखिरी मौका ३५% तक छूट

जीवनीय की दरें

	वर्तमान	१५ जनवरी १९९२से प्रस्तावित
एक प्रति	६	१०
वार्षिक	३०	४५
द्वैवार्षिक	५५	८५
त्रैवार्षिक	८०	१२०
आजीवन	३५०	४५०

ग्राहक चंदा अनुरोध कार्ड

जीवनीय द्वैमासिक

☐ कृपया मुझे एक/दो/तीन वर्ष/जीवन भर के लिये जीवनीय का ग्राहक बनाकर यह हिन्दी/अंग्रेज़ी पत्रिका निम्नलिखित पते पर भेजने का कष्ट करें। मैं चंदे की सहयोग राशि रु............ ड्राफ्ट (नं......... दिनाँक ....)/धनादेश द्वारा प्रेषित कर रहा हूं।

नाम : ....

पता : ....

कोड : ☐☐☐☐☐☐☐ भवदीय

डिमांड ड्राफ्ट एल.एस.पी.एस.एस.– जीवनीय के नाम भेजें। लखनऊ के बाहर के चेकों में कृपया १० रु. और जोड़ दें।

डॉ. जैन्स स्पेशल हर्बस्

(वनौषधियाँ और नैसर्गिक सुगंधी तेल निर्यात करने वाली मान्यवर कंपनी)

सौंदर्यवर्धन और स्वास्थ्य के लिए शुद्ध और उच्च प्रतीकी वनौषधियाँ मुलायम और निर्जंतुक पावडर स्वरूप में उपलब्ध हैं।

- अडूसा, कुमारी, गोखरमुंडी, आमला, अर्जुन, असगंध, बबूल, ब्राह्मी, बावची, चंदन, संमाछाल, अनारछाल, गुडमार, जिनसेंग, अंबाहल्दी, जवाकुसुम, मुलेठी, कपूरकचरी, खैरछाल, खस, लोध्र, भृंगराज, मजीठ, नीम, नागरमोथा, पपया, रीठा, गुलाब, शतावर, शिकाकाई, सोनामुखी, तुलसी, त्रिफला, बायविडंग, जामुन, रक्तचंदन, विजयसार
- नैसर्गिक और अॅरोमाथेरेपी तेल – बादाम, नींबू, संमा, चंपा, गुलाब, चमेली, निलगिरी, ज्युनिपर, लवेंडर, पचौली, मालकांगनी, बावची, चौलमुग्रा इ.
- वनौषधियों का इस्तेमाल और फॉम्युली इनके बारे में दो पुस्तिका उपलब्ध हैं। (म. ऑ. रु. २०/–)

संपर्क : डॉ. जैन्स स्पेशल हर्बस्, ए ९० राज कॉम्प्लेक्स, मिलिटरी रोड, मरोल, अंधेरी (पूर्व) बंबई ४०० ०५९
टेलीफोन ६४२८६८७, ६३७०४४१
टेलेक्स ०११ ७८२३२ JAIN IN

अन्य राज्यों में एजेंटस् नियुक्त करने हैं।

लोक स्वास्थ्य परंपरा संवर्धन समिति (लोस्वापसंस)
के
प्रमुख प्रकाशन

प्रकाशन का नाम	अवधि	मूल्य	पता
समाचार पत्रक (अंग्रेजी)	चार मास पर	निःशुल्क सदस्यों के लिए	लोस्वापसंस पो. बा. नं. ७१०२ कोयंबटूर – ६४१ ०४५
कंपाउंड फार्म्यूलेशन	आवश्कतानुसार	२५ रु.	"
कंपाउंड फार्म्यूलेशन	आवश्यकतानुसार	२५ रु.	"
मातृ एवं शिशु स्वास्थ्योपयोगी औषधीय पौधे	"	"	"
प्राथमिक स्वास्थ्य में लाभकारी वनौषधियां भाग – १	"	"	"
प्राथमिक स्वास्थ्य में लाभकारी वनौषधियां भाग – २	"	"	"
विष चिकित्सा पर हस्तपुस्तिका	"	१५ रु.	"
जीवनीय (हिन्दी) (लोक स्वास्थ्य की पत्रिका)	द्वैमासिक	३० रु.	लोस्वापसंस, ई – III/ २५०, सेक्टर – एच लखनऊ – २२६०२० (उ.प्र.)
जीवनीय (अंग्रेजी)	"	"	"
समाचार पत्रक (हिन्दी)	चार मास पर	निःशुल्क	"
तुलसी वनौषधि पर आकर्षक सचित्र पोस्टर		पाँच रु.	"
मोनोग्राफ स्थानीय स्वास्थ्य परंपराएं (मोनोग्राफ) (हिन्दी)	चार मास पर	३० रु.	"
भारतीय चिकित्सा पद्धति में पोषण भाग –१			पी.पी.एस.टी. फाउंडेशन २९, चार मेन रोड, गांधीनगर, अड्यार, मद्रास – ६०००२०
मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य भाग – १	"	"	
मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य भाग –२	"	"	"
मर्म चिकित्सा	"	"	"

रजिस्ट्रेशन न. ५११०३/९०

Introducing...

ALL ROUND EFFECTIVE HERBAL MEDICAMENT FOR ALLERGIC RHINITIS & BRONCHIAL ASTHMA....

RESPINORM

The potent herbal drug with proven ability to act at various causes which lead to bronchial asthma, bronchitis, allergic rhinitis and other allergic conditions.

HOW RESPINORM ACTS ?

RESPINORM - decreases bronchial spasm.

RESPINORM - is immunomodulator.

RESPINORM - has antistress principle.

RESPINORM - has mucolytic action.

RESPINORM - is an antihistaminic drug.

RESPINORM - has antimicrobial effect.

For further information please fill up the coupon and mail it to us.

HERBAL CELL
CADILA LABORATORIES LIMITED
244, Ghodasar, Maninagar, Ahmedabad 380 050 INDIA

Yes, I want more information on RESPINORM

Dr. .....

Area of Specialization .....

Address .....

.....

.....

..... Pin Code

Hospital/Institute/Clinic

Marketed by :
ALIDAC GENETICS & PHARMACEUTICALS
244, Ghodasar, Maninagar, Ahmedabad 380 050
Mfd. By : **CADILA LABORATORIES LIMITED**
244, Ghodasar, Maninagar, Ahmedabad 380 050

ALIDAC

CL/HERB/91/1